परममंगलमय 'श्रीबाबामहाराज का जन्मोत्सव'

बधाई-गीत (रचना - श्रीचन्द्रभानुजी, वल्लभगढ़)

जन्मदिन आज मनायेंगे, ये शुभ दिन आज मनायेंगे | पूज्य श्री बाबा जी के हम चरणों में शीश नवायेंगे || १४ वर्ष की आयु में ब्रज से नाता जोड़ लिया, उच्च शिक्षा लेके बाबा ब्रज की ओर दौड़ लिया | राजघराना परिवार सबका मोह छोड़ दिया, बरसाने में मान मंदिर मान बिहारी का | ये गाथा डाकुओं का अड्डा था खतरा जिंदगानी का, यहीं पर निवास हुआ संत महाज्ञानी का | **यह गाथा मिलकर गाएँगे, जन्मदिन आज मनाएँगे | पूज्य श्रीबाबाजी के हम, चरणों में शीश नवायेंगे ||** साधुओं की संगत करके बाबाजी निहाल हुए, राधारानी के चरणों में रहती खुशहाल हुए | ब्रजरानी की सेवा में बाबा बेमिसाल हुए, शिरोमणि विरक्त संत बाबाजी महान हैं | राधाकृष्णजी का सदा करते गुणगान हैं, अपने प्यारे सेवकों का रखते पूरा ध्यान हैं | **श्रीप्रियाशरण गुरुजी के बाबाजी शिष्य कहावे, जन्मदिन आज मनाएँगे |**

पूज्य श्रीबाबाजी के हम, चरणों में शीश नवायेंगे || गहवरवन को हरा-भरा श्रीबाबा ने करवा दिया, पहाड़ और वनों को भी करके संघर्ष बचा लिया, लुप्त सरोवर खोज के उनको जल से भरवा दिया | निःशुल्क कोस ८४ की परिक्रमा करवाते हैं, हर वर्ष हजारों यात्री यहाँ दूर-दूर से आते हैं, बाबा के दर्शन पाके निज सोया भाग्य जगाते हैं | **रास होय हर रोज संतजी नई-नई कथा सुनावे, जन्मदिन आज मनाएँगे | पूज्य श्रीबाबाजी के हम, चरणों में शीश नवायेंगे ||** माताजी गौशाला में है गोवंश की भीड़ भारी, लगभग ६० हजार गाय आराम से रहती हैं सारी | अस्पताल गायों के लिए बनवा दिया त्यारी, यमुना में शुद्ध जल लाने की अबकी बारी | पद्मश्री सरकार ने देके किया सम्मान है, राधाजी के सेवक बाबा भक्तों के भगवान् हैं | **वर्णन हो न सके विजेंद्र गलती की माफी चाहवे, जन्मदिन आज मनाएँगे | पूज्य श्री बाबा जी के हम चरणों में शीश नवायेंगे ||**

पूज्य श्रीबाबा महाराज के जन्ममहोत्सव पर

मलूकपीठाधीश्वर श्रीराजेन्द्रदासजी महाराज का उद्बोधन

आज अत्यंत सौभाग्य का क्षण है, जो श्रीजी के दर्शन के फल के रूप में श्री बाबा महाराज का मंगलमय दर्शन कर रहे हैं और उनका पूर्ण स्वस्थ्य दर्शन करके और उनकी वाणी का श्रवण करके मन में इतना आह्लाद हो रहा है कि दास को तो आज बधाई मिल गई और श्रीजी के चरणों में एक ही प्रार्थना है कि ऐसे ही श्रीबाबामहारज की मंगलमय सन्निधि हम सबको प्राप्त होती रहे | बाबा मन से तो पूर्ण स्वस्थ हैं ही, शरीर से भी निरंतर स्वस्थ्य रहें | निश्चित ही श्रीजी का अनुग्रह, ब्रजभूमि का अनुग्रह, ब्रज के समस्त रसिकाचार्यों, पूर्वाचार्यों का अनुग्रह आज बाबा महाराज के रूप में हम सबको मूर्तिमान दिखाई पड़ रहा है | श्रीउद्धवजीमहाराज ने विदुरजी से कहा था –

दुर्भगो बत लोकोऽयं यदवो नितरामपि |
ये संवसन्तो न विदुर्हरिं मीना इवोडुपम् ||

(श्रीमद्भागवतजी २/२/८)

निश्चित ही यह संसार भाग्यहीन है, यदुवंशी और अधिक भाग्यहीन हैं जो श्रीकृष्ण के निरंतर साथ रहकर भी श्रीकृष्ण को पहचान न सके, जैसे सुधाकर (चंद्रमा) को समुद्र में रहते समय मछलियाँ पहचान नहीं सकीं | जो बात उद्धवजी ने श्रीठाकुरजी के संबंध में कही, वही बात बाबा की कोटि के महापुरुषों के संबंध में है, उनकी विराजमान अवस्था में हम उनकी गरिमा-महिमा को पहचान लें तो जीवन कृत्य-कृत्य (कृतार्थ) हो जाए | दास तो अपना परम सौभाग्य मानता है कि पूज्य बाबा का मंगलमय-दर्शन, उनकी कृपा-करुणा बनी हुई है | हरिनाम का इस कलिकाल में क्या दिव्य प्रभाव है, क्या चमत्कृति है, इसका प्रत्यक्ष दर्शन पूज्य बाबा के जीवन के माध्यम से हो रहा है | आज एक स्थान पर ५५ हजार से ऊपर गौवंश एक स्थान पर, एक गोष्ठ में अन्यत्र कहीं नहीं है, इतनी बड़ी सेवा 'पूर्ण त्याग-वृत्ति' से जहाँ मधुकरी से निर्वाह होता है, संग्रह-परिग्रह से शून्य हैं, इस प्रकार की वैराग्यपूर्ण वाणी, निश्चित ही आप सबका बड़ा सौभाग्य है कि आपको ऐसी पवित्र वाणी नित्य सत्संग के रूप में प्राप्त हो रही है 'नित्य सत्संग का सुख ही सर्वोपरि सुख है' नित्य सत्संग का सुख श्रीजी के नित्य विहार स्थल इस ब्रजमण्डल की कौन-सी ऐसी सेवा है जो लाड़लीजी ने श्रीबाबामहाराज के माध्यम से स्वीकार न की हो, सभी सेवाएँ श्रीजी स्वीकार कर रही हैं, हमें इस बात की बड़ी ग्लानि और पश्चाताप रहता है कि हम पूज्य बाबा की चरण-सन्निधि का प्रत्यक्ष संग नहीं कर पाते हैं लेकिन पूज्य बाबा के मंगलमय चरणों का स्मरण उनका पवित्र ध्यान श्रीजी की कृपा से प्रायः बना ही रहता है; बरसाने का ध्यान, माताजी गौशाला का स्मरण ऐसा सौभाग्य हम लोगों को निरंतर प्राप्त होवे |

श्लोक – २९

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनमाश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः । आश्चर्यवच्चैनमन्यः श्रृणोति श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित् ॥

जो इस आत्मा को आश्चर्य के समान देखता है तथा आश्चर्य की तरह इसके विषय में बोलता है तथा आश्चर्य की तरह इसे सुनता है अर्थात् आत्मा को देखने वाला, सुनने वाला, बोलने वाला, इसको अनुभव करने वाला – सभी कुछ आश्चर्य है, कोई-कोई तो इसको सुनकर के भी नहीं जान पाते हैं | कोई-कोई ही इस आत्मा को आश्चर्य की तरह देखता है और इसके बारे में कहने वाला भी आश्चर्य के अंतर्गत है, जो आत्मा के तत्व को समझता है और दूसरों को समझाता है तथा आत्मा के बारे में कोई सुनता है, यह भी आश्चर्य है अन्यथा ऐसी महत्वपूर्ण बात को सुनने का किसके पास समय है क्योंकि संसार तो विषय भोगों में डूब रहा है | मूर्खों को शिक्षा दो तो उनको ज्ञान नहीं होता है | इसलिए आत्मा को कहने वाला आश्चर्य है, इसके बारे में सुनने वाला आश्चर्य है और इसे देखने अथवा अनुभव करने वाला भी आश्चर्य है | आत्मा के परायण होना आश्चर्य तो है ही अन्यथा सम्पूर्ण संसार विषयासक्ति की गधा पचीसी में डूबा हुआ है | किसके पास आत्मा को देखने का मौका है, (शेष पृष्ठ- ५ पर..)

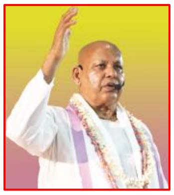

जन्ममहोत्सव पर पूज्य श्रीबाबा महाराज का उद्बोधन -

(सच्ची शरणागति से सहज ही संपोषण)

जब कोई शरणागति ठीक-ठीक करता है तो भगवान् अवश्य शरणागतों का पालन-पोषण करते हैं, उनकी प्रतिज्ञा है, ये सारा संसार जानता है, गीता का सार यही है –

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥
(श्रीमद्भगवद्गीताजी १८/६६)

भगवान् का यह प्रतिज्ञा वाक्य है | गीता के अठारहवें अध्याय के अंत में भगवान् ने अर्जुन से यह कहा और उन्होंने यह बात केवल कही नहीं अपितु की भी है, दिन-रात कर रहे हैं, यद्यपि इस पर पूर्ण विश्वास होना भी उनकी कृपा से ही सम्भव है | इस विश्वास की प्राप्ति के लिये उन्होंने प्रमाण स्वरूप भारतवर्ष में वे चमत्कार भी दिखाये, जिसे हमलोग समझ नहीं पायेंगे | भगवान् ने गीता में जो श्लोक (१८/६६) कहा, ये एक आश्चर्यजनक वाक्य है, जो घोर कलियुग में भी भक्तजनों को प्रत्यक्ष रूप में दिखाई पड़ रहा है, जबकि ये चमत्कार सबके सामने हो रहा है लेकिन स्पष्ट रूप से समझने-देखने वाले विशुद्ध भक्तजन ही हैं | शरणागति की पहिचान शुद्ध संकीर्तन से होती है | श्रीमानमंदिर के सभी सेवा-कार्य निष्काम भावमयी आराधना-शक्ति से सहज हो जाते हैं | स्वार्थ-सिद्धि के लिए धर्म को व्यापार नहीं बनाओ, किसी को पढ़ाओ-लिखाओ तो पैसे मत लो, अपनी सेवा को बेचो नहीं, इस तरह से यह देश उठ जाएगा | यह भारतदेश त्यागियों का देश है, जहाँ के आचार्य, संतजन, बड़े-बड़े महापुरुष परम त्यागी हुए हैं, जिन्होंने निष्किंचना-वृत्ति से विशुद्ध भागवतधर्म का संरक्षण-संवर्द्धन किया है | सांसारिक कामनाओं की पूर्ति के लिए धर्म को बेचने से धर्म खोखला हो जाएगा, इससे देश का नुक्सान हो जाएगा, समाज व संस्कृति का नुकसान होगा | हम लोग देश के भक्षक हैं, रक्षक नहीं है; आज जो रक्षक हैं, वे भक्षक बन गए | इसलिये श्रीराधारानी कृपा करें और हम चाहते हैं सच्चे त्यागी लोग ही वक्ता बनें, जो नि:स्वार्थ भावपूर्वक सम्पूर्ण त्याग से चल रहे हैं और भारत की सच्ची सेवा (निष्काम भक्ति दान) कर रहे हैं, वे लोग परम धन्य हैं |

किसके पास आत्मा के बारे में कहने, उपदेश करने का समय है, किसके पास आत्मा के बारे में श्रवण करने का अवसर है | आत्मा-परमात्मा के तत्व को कोई सुनना नहीं चाहता | कोई-कोई इसे आश्चर्य की तरह सुनता है | उपनिषदों में एक उपनिषद है - केनोपनिषद | 'केन' का अर्थ है – 'कैसे ?' इस उपनिषद में समझाया गया है कि इस शरीर के भीतर कौन बोल रहा है ? बोलने की शक्ति शरीर के भीतर कैसे आई ? आँख देखती है, उसमें देखने की शक्ति कैसे आई, नाक सूंघती है, उसमें सूंघने की शक्ति कैसे आई ? मन सोचता है, बुद्धि विचार करती है, उनमें चेतना की शक्ति कहाँ से आई ? आत्मा की शक्ति से मनुष्य की आँखे देखती हैं, आत्मा की शक्ति से नाक सूंघती है, आत्मा की ही शक्ति से हाथ-पाँव चलते हैं | यह एक आश्चर्य है | मुर्दा शरीर उठ रहा है, बैठ रहा है, चल रहा है – यह एक आश्चर्य है | **"नौ द्वारन को पींजरा पक्षी बैठो भौन | रहवे को अचरज महा उड़बे अचरज कौन ||"** किसी चिड़िया को यदि नौ द्वारों के पिंजड़े में रख दिया जाय और उस पिंजड़े के नौ द्वार खुले हैं | अब यदि चिड़िया उड़ गई तो इसमें आश्चर्य क्या है क्योंकि द्वार खुले हैं अतः चिड़िया किसी भी द्वार से निकल सकती है | उसी प्रकार यह जीवात्मा है | यह जिस शरीर में रहता है, उसमें भी नौ द्वार हैं | दो आँख के छिद्र, दो नाक के छिद्र, दो कानों के छिद्र, एक मुख और एक-एक मल-मूत्र इन्द्रिय के छिद्र, इस प्रकार शरीर में नौ दरवाजे हैं | इन दरवाजों में किसी भी दरवाजे से जीवात्मा रूपी पक्षी उड़ जाता है | इसलिए आश्चर्य तो ये है कि शरीर के नौ दरवाजे खुले हैं फिर भी जीवात्मा रूपी पक्षी नहीं उड़ रहा है | यह एक आश्चर्य है कि पक्षी उड़ नहीं रहा है और बराबर बंधन में काम कर रहा है | इसलिए आत्मा को अनुभव करने वाला, आत्मा के बारे में श्रवण करने वाला, समझने वाला- यह दुनिया में एक आश्चर्य है क्योंकि किसके पास समय है कि इन बातों को सुने और समझे क्योंकि संसार के समस्त मनुष्य अज्ञान में डूबे हुए हैं | आत्मा-परमात्मा के बारे में सुनकर के भी लोगों को ज्ञान नहीं होता; यदि सच्चे संतों का सत्संग नित्य-निरन्तर श्रवण-मनन करके आचरण में लाया जाए तो सहज ही प्रबल अविद्या (अहंता-ममता) की गाँठें छूटने लगती हैं |

परम प्रेरणाप्रदायी 'बाबाश्री की ब्रजसेवाराधना'

श्रीबाबामहाराज की टी.वी. चैनल से प्रेसवार्ता

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी नवीनाश्रीजी, मानमन्दिर, बरसाना

टी. वी. चैनल से प्रेसवार्ता –

प्रश्नकर्ता – प्रयागराज में आपका जन्म हुआ, बचपन वहाँ बीता, फिर गह्वरवन, बरसाना तक का सफ़र कैसे शुरू हुआ, यहाँ आपका आना कैसे हुआ ?

श्रीबाबा महाराज – प्रयाग में जन्म होने के पश्चात् स्कूली-शिक्षा पूरी करने के बाद मैं विश्वविद्यालय में स्नातक की पढ़ाई के लिए जाता था और शाम को राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की शाखा में जाता था, वहाँ राष्ट्रीयता के गीत गाये जाते थे, देश-प्रेम की भावना से ओतप्रोत उन गीतों को सुनकर हम भी बोलते थे, बार-बार सुनने-गाने से मुझे भाव प्राप्त हुआ कि हमें भी देश के लिए कुछ करना चाहिए | ३१ जनवरी १९४८ को जब गाँधीजी की हत्या हुई तो राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ (आर. एस. एस) पर रोक लगा दी गई और तब मेरे घरवालों ने मुझे शाखा में जाने से रोक दिया क्योंकि 'आर.एस.एस.' के सदस्यों को गिरफ्तार करके जेल में भेजा जा रहा था और तब मैं छोटा था, घरवालों की आज्ञा के विरुद्ध चलने की मुझमें हिम्मत नहीं थी | यह भी ईश्वर की कृपा थी कि मेरा आध्यात्मिक जीवन भी वहीं से शुरू हुआ क्योंकि जब राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की शाखा में जाना बंद हो गया तो मैं क्या करता, इसलिए खाली समय में आध्यात्मिक कार्यक्रमों में जाने लगा और इस तरह मेरा आध्यात्मिक जीवन शुरू हुआ | उस समय मेरा संपर्क ऐसे सत्संगियों से हुआ जो ब्रज-प्रेमी थे, उनके सत्संग में ब्रज के गीत गाये जाते थे, ब्रज की चर्चाएँ होती थीं, वहाँ मुझे ब्रज का वातावरण मिला और इसका यह प्रभाव पड़ा कि मेरे मन में 'ब्रज का दर्शन' करने की इच्छा उत्पन्न हुई | लगभग सन् १९५३ के आसपास घरवालों से छिपकर मैं प्रयाग से भागकर **'ब्रज'** में आया क्योंकि घर वाले तो मुझे यहाँ आने नहीं देते थे | सन् १९५४ में मैंने दृढ़तापूर्वक यह निश्चय कर लिया कि अब मुझे घर छोड़ देना चाहिए | सन् १९५४ में जब मैं बरसाना आया तो पहली रात मैंने मानगढ़ पर ही विश्राम किया क्योंकि उस समय यह स्थान डाकुओं का अड्डा होने के कारण निर्जन था और भय के कारण कोई यहाँ रहता भी नहीं था | जब पहली बार रात में मैं यहाँ सोया तो देखा कि यहाँ चारों ओर सुनसान था, बिजली का प्रबंध भी उस समय कहीं नहीं था | रात को मानगढ़ पर चोर-डाकू आते थे | प्रसिद्ध डाकू 'जहाँन' का यह अड्डा था और मैंने ही स्वयं कई बार चोरों का यहाँ आना-जाना देखा तो विचार किया कि कैसे इन चोर-डाकुओं का मानगढ़ से सफाया हो जाए | उस समय मानपुर के कुछ ब्रजवासी मेरे पास कीर्तन की दृष्टि से आया करते थे, उनमें मानमंदिर के प्रबंधक राधाकान्तजी के पिताश्री प्रकाशजी प्रमुख थे; उस समय मैंने उनसे कहा कि ब्रज के कुण्डों की हालत बहुत खराब है, इन ब्रजवासियों ने कहा कि हमारे गह्वरवन का कुण्ड भी कीच से भर जाता है, दूषित हो चुका है | हमने इन लोगों से कहा – "कोई बात नहीं, तुम लोग ब्रज की सेवा के लिए उठो |" मेरे ऐसा कहने पर ये ब्रजवासी अपने गाँव से फावड़ा, परात और तसले लेकर आये और गह्वरकुण्ड (राधासरोवर) की सफाई के कार्य में जुट गए |

प्रश्नकर्ता – यहाँ आने के बाद जब आपने अपनी माताजी को पत्र लिखा तो वह बड़ा मार्मिक था, मैंने उसे पढ़ा | पहले तो यह बताइये कि माताजी ने आपको क्या लिखा, जिसके बदले में आपने उन्हें यह पत्र लिखा और वह कैसा समय था क्योंकि उस पत्र में भावनाएँ साफ दिखाई देती हैं | कोई यदि उस पत्र को पढ़ेगा तो एक पुत्र का अपनी माँ के प्रति कैसा प्रेम है, यह उस पत्र में स्पष्ट दिखाई देता है |

श्रीबाबा महाराज - माताजी ने क्या लिखा, यह तो मुझे याद नहीं है किन्तु मैं ब्रज आने के बाद पुनः घर नहीं गया | सन् १९५३ में मैं चित्रकूट चला गया था | मेरी बहन की 'आई.जी.ऑफिस' में जान-पहचान थी, मेरे पिताजी अंग्रेजों के शासन में पुलिस-प्रशासन के

अधिकारी रह चुके थे, उस समय केवल अंग्रेज लोग ही उस पद पर हुआ करते थे | यंग साहब नामक अंग्रेज पुलिस अधिकारी (वह हमारे घर पर ही रुकता था), जिसने विश्वविख्यात सुल्ताना डाकू को गिरफ्तार किया था; उसी समय से मेरे मन में राष्ट्रीयता की भावनाएँ थीं और इसलिए गृहत्याग करने के बाद पुनः मैं घर नहीं गया | एकबार अवश्य चित्रकूट से मुझे माताजी के कारण घर जाना पड़ा था किन्तु घर में मेरा मन नहीं लगा और मैंने स्पष्ट रूप से माताजी से कह दिया कि अब मैं ब्रज में अखण्ड वास करूँगा, यदि आपको मुझसे मिलना है तो ब्रज में आ जाइये | इसके बाद मैं ब्रज में चला आया और जब बरसाने में आया तथा लोगों से अपने रहने के स्थान के लिए पूछा तो ब्रजवासियों ने कहा कि मानगढ़ खाली, एकान्त स्थल है किन्तु वह चोरों का अड्डा है | मैंने कहा - कोई बात नहीं, भगवान् रक्षा करेंगे और इस तरह मैं मानगढ़ पर रहने लगा | उस समय मानगढ़ पर मेरे साथ लाड़िलीदासजी नामक एक साधु और भी रहते थे, जिनका इस समय बरसाने में एक अलग आश्रम है | हम दोनों का आपस में प्रेम था, वह मानगढ़ पर रहते समय भिक्षा माँगते थे, मैंने उन्हीं से ब्रज में भिक्षा माँगना सीखा था |

प्रश्नकर्ता – जब आप ब्रज में आये तो आपने यहाँ के कई स्थानों में राधानाम की अलख जगाई, ब्रज में भक्ति का प्रचार किया........|

श्रीबाबा महाराज – यह पीछे की बात है, पहले मैंने मानगढ़ पर कीर्तन आरम्भ किया, कीर्तन से यह लाभ हुआ कि ब्रजवासियों का एक संगठन बन गया और इन्होंने 'गह्वरवन-कुण्ड' को स्वच्छ करने में सहयोग दिया व मानमंदिर पर कीर्तन के लिए आने वाले ब्रजवासी ही फावड़ा और तसला लेकर राधासरोवर की सफाई के लिए आया करते थे | तब मैं समझ गया कि यह तो कीर्तन की अद्भुत शक्ति है और इसीलिए मैंने यह (ब्रज की सेवा करने का) विचार किया, तभी ब्रज में चारों ओर कीर्तन के प्रचार का कार्यक्रम भी बनाया और उसमें सफलता भी मिली | मैंने अपने प्रारम्भिक सहयोगी श्रीप्रकाशजी से कहा कि आपका धाम-सेवा का कार्य व्यर्थ नहीं जा रहा है, इसमें आप लगे रहिए | उस समय मानपुर-ग्रामवासियों में आपसी फूट थी और इसका दण्ड मुझे भी मिला | जो लोग प्रकाशजी के विरोधी थे, वे मेरे भी विरोधी बन गए | गाँव में एक बार कीर्तन के समय उन लोगों ने एक लड़के को पत्थर मारा, उसका सिर फट गया | उसके लिए मुकदमा भी चला था | इस घटना के बाद गाँव वालों ने कीर्तन वालों के बारे में यही समझा कि ये लोग बड़े बदमाश हैं, लड़ाई-झगड़ा करते हैं तथा नारा लगाते हैं- 'धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो' | विरोधी पार्टी वालों ने कीर्तन करने वालों को गाँव में कीर्तन करने से रोक दिया और कह दिया कि यदि पुनः गाँव में आओगे और कीर्तन करोगे तो फिर से तुम लोगों पर पत्थरों से हमला किया जाएगा | उस दिन से मैंने यही सोचा कि चलो अच्छा है, भगवान् की ऐसी ही इच्छा है तो मैं गाँव में न जाकर 'मानमंदिर' में ही कीर्तन किया करूँगा | मानपुर गाँव के मेरे सहयोगी ब्रजवासी मानमंदिर पर प्रतिदिन कीर्तन के लिए आने लगे और इस प्रकार जब मानमंदिर पर कीर्तन प्रारम्भ हो गया तो एक अच्छी पार्टी, एक अच्छा संगठन बन गया | इसके बाद मैंने ब्रज के कुण्डों की सफाई के बारे में विचार किया और सबसे पहले गह्वरवन के राधासरोवर का शोधन किया गया | उसके बाद कोसी के कुण्ड (गोमती गंगा) की सफाई हुई, कोसी के ब्रजवासियों का काफी सहयोग मिला तो वहाँ पर गोमती गंगा की सफाई की गई | धीरे-धीरे ब्रज के अन्य स्थलों पर भी कुण्डों के शोधन के सम्बन्ध में सफलताएँ मिलती गयीं क्योंकि हमारे पास अच्छा संगठन था | उस काल में मैंने अनुभव किया –

कीर्तन एक ऐसी चीज है, जिससे बड़ी जल्दी संगठन बनता है और यही संगठन गांधीजी के साथ था |

गांधीजी भारत की स्वतंत्रता के लिए कीर्तन करते थे –

रघुपति राघव राजाराम | पतित पावन सीताराम ||

वह कीर्तन हमारे यहाँ (बाबाश्री की जन्मभूमि

इलाहाबाद) से शुरू हुआ था | हमारी माताजी बताती थीं कि प्रयाग में मुंशी रामनारायण की बगिया में विष्णु दिगंबरजी आये थे, जिन्होंने इस प्रसिद्ध कीर्तन – **"रघुपति राघव राजाराम ....|"** की ट्यूनिंग (धुन) बनायी थी | वहाँ पर कृष्णकुञ्ज नामक एक बहुत बड़ी बिल्डिंग थी, वहाँ गांधीजी भी आये थे, उस समय हम वहाँ कीर्तन करते थे | कृष्ण कुञ्ज एक प्रसिद्ध बिल्डिंग थी, वर्तमान में तो वह खंडहर बन चुकी है | उस जमाने में तो कृष्णकुञ्ज जैसा भवन प्रयाग में कोई नहीं था | जन्माष्टमी के दिन वहाँ प्रदर्शन के लिए गाड़ियाँ चलती थीं | माताजी के रिश्तेदार मुंशीराम नारायण की बगिया में भारत के प्रसिद्ध संगीतज्ञ विष्णु दिगंबरजी आये थे | उस समय तो मेरा जन्म भी नहीं हुआ था | मेरे पिताजी उस समय थे, उन्होंने प्रयाग के कुछ वरिष्ठ लोगों के साथ मिलकर वहाँ कीर्तन का एक कार्यक्रम आयोजित किया था, उस कार्यक्रम में सम्मिलित होने के लिए गाँधीजी आये थे और माँ आनन्दमयी भी आईं थीं, वह भी भारत की एक प्रसिद्ध विभूति हुई हैं | इसी तरह से मेरे पिताजी ने प्रयाग में पंचकोसीय परिक्रमा हेतु एक कमेटी बनाई | पहले तो प्रयाग में धार्मिक उत्सवों पर अधिक भीड़ नहीं होती थी | प्रयाग की पाँच कोस की परिक्रमा करने से अत्यधिक पुण्य की प्राप्ति होती है | यह परिक्रमा भी हमारे पिताजी (बल्देव प्रसाद शुक्लजी, जिन्हें लोग शुक्ल भगवान् कहते थे) ने शुरू करवाई थी |

प्रश्नकर्ता – 'ब्रज की परिक्रमा' का क्या महत्व है और आपने इसका संचालन कैसे किया ?

श्रीबाबा महाराज – जब मैं मानगढ़ पर रहने लगा तब ब्रज-परिक्रमा का विचार मन में आया | यहाँ मेरे पास लोग आते थे और पूछते थे कि ब्रज कहाँ तक है ? उस समय ब्रज में ब्रज के स्थलों का शास्त्रीय प्रमाण के अनुसार विवेचन करने वाला कोई साहित्य भी नहीं था तो मैंने सोचा कि यह कमी भी दूर होनी चाहिए और वह कमी काफी वर्षों के बाद दूर हुई | उस समय तो हमारे पास कोई साधन भी नहीं था, गाड़ियाँ नहीं थीं, कैमरे नहीं थे | ब्रज के स्थलों की खोज करने के लिए, अनेकों लीला स्थलियों तक पहुँचने के लिए गाड़ी की आवश्यकता थी, पैदल ही मैं कहाँ-कहाँ तक दौड़ सकता था | पीछे मानमंदिर के कार्यक्रमों का विस्तार हुआ तो यहाँ गाड़ियाँ भी आ गयीं, कैमरे भी आ गए और अन्त में ब्रज के स्थलों के माहात्म्य को विस्तार से वर्णित करने वाली पुस्तक 'रसीली ब्रजयात्रा' का भी यहाँ से दो भागों में प्रकाशन हो गया | जब ब्रज के कुण्डों का मानमंदिर सेवा संस्थान द्वारा शोधन-कार्य (जीर्णोद्धार) होने लगा तो इस अभियान का धीरे-धीरे समाज पर प्रभाव पड़ा | इस सम्बन्ध में ब्रज में बहुत-सी संस्थाएँ भी बनी | ब्रज-सेवा हेतु अन्य भी कई संगठन बने, इस तरह समाज में इसका विस्तार हुआ | जब लोग मुझसे पूछा करते थे कि ब्रज कहाँ तक है तो मैंने सोचा कि ब्रज-सम्बन्धी कोई प्रामाणिक साहित्य मिल जाए तो उससे समाज को लाभ मिलेगा किन्तु उस समय ब्रज-वृन्दावन के बाजारों में जो ग्रन्थ थे, वे छोटे स्तर के थे, उनके द्वारा यही नहीं पता चलता था कि ब्रज चौरासी कोस कहाँ तक है ? मैंने स्वयं भी ब्रज की लीलास्थलियों की खोज के लिए सात-आठ ब्रजपरिक्रमायें पैदल कीं, इससे मुझे ब्रज के बारे में पर्याप्त अनुभव हो गया, यह समझ में आ गया कि कौन-सा स्थल कहाँ पर है ?

प्रश्नकर्ता – ब्रजपरिक्रमा के दौरान आपके सामने बहुत-सी परेशानियाँ भी आती होंगी क्योंकि मैंने स्वयं देखा है कि जब आप यात्रियों को लेकर ब्रज-परिक्रमा के लिए जाते थे तो ब्रज के कई स्थान ऐसे थे जहाँ के निवासियों ने कभी नहीं सोचा था, कभी नहीं सुना था कि यहाँ ब्रजपरिक्रमा का स्थल है; ऐसे गाँवों से होकर जब आपकी यात्रा जाती थी तो वहाँ कैसी स्थितियाँ रहती थीं क्योंकि परिक्रमा के बाद यह देखने को मिला कि वहाँ का स्वरूप बदला है, वहाँ के पौराणिक स्थलों को पुनः जिन्दा करने के लिए आपने काफी मेहनत की, बहुत अधिक प्रयास किये तो वह समय कैसा था, किस तरह आपकी ब्रज-परिक्रमा निकलती थी, कई इलाके ऐसे थे, जहाँ से परिक्रमा निकालना अत्यधिक मुश्किल था |

श्रीबाबा महाराज – यह तो लम्बा मामला है, मैं संक्षेप में बताऊँगा | जब मैंने अकेले ब्रज की परिक्रमा शुरू की तो उस समय गाँव-गाँव में शाम को कीर्तन होता था | ब्रजवासी अखाड़े में जाते थे, व्यायाम करते थे और अखाड़े में ही दो-चार मिनट

वे कीर्तन करते थे | उनके कीर्तन में मैं भी पहुँच जाता था और ब्रज के रसिया गाया करता था, इस तरह ब्रजवासियों से परिचय हो जाया करता था और एक संगठन बनता गया, ये है इसका इतिहास |

प्रश्नकर्ता – गह्वरवन की रक्षा हेतु भी बड़ा संघर्ष किया गया, इस वन को बचाने के लिए आपने बहुत मेहनत की | प्रारम्भ में क्या हुआ था और कैसे-कैसे आपको मुश्किलों का सामना करना पड़ा ?

श्रीबाबा महाराज - डी.एम. (जिलाधिकारी) से गह्वरवन की रक्षा के सम्बन्ध में कोशिश करने पर उन्हें कुछ सफलता मिली | अतः गह्वरवन की रक्षा का सारा श्रेय मैं स्वयं क्यों लूँ, कुछ श्रेय वंशीधरजी का भी था | वह हम लोगों की तरफ से इस धाम-सेवा के पुनीत कार्य में जुड़े फिर डी.एम ने हम लोगों को गह्वरवन की सुरक्षा के सम्बन्ध में अच्छी सफलता दिलाई | माफियाओं ने गह्वरवन को घेरकर दोहनीकुण्ड के सारे पेड़ काट दिए थे | उस समय चिकसौली के प्रधान ने दोहिनीकुण्ड में लगे सारे कदम्ब के वृक्ष बेच दिए | यह देखकर मुझे बहुत दुःख हुआ और विचार किया कि ब्रज में असंख्य वृक्ष और लताएँ कट रही हैं, इनकी रक्षा करनी चाहिए | इस तरह धीरे-धीरे ब्रजभूमि की सेवा का विचार प्रस्फुटित होने लगा और इसके लिए मैं कोशिश करता रहा | उस समय मेरा यही कार्य था - ब्रज के गाँव-गाँव में जाना | गाँवों में जाकर ब्रज की सेवा हेतु ब्रजवासियों से संपर्क करता था | तब तो मैं स्वयं गाँवों में जाया करता था, अब तो शारीरिक अस्वस्थता के कारण उस प्रकार जाने में असमर्थ हूँ | अब इसकी आवश्यकता भी नहीं रह गई है क्योंकि ब्रज का कार्य करने वाले इस समय मानमंदिर सेवा संस्थान के अनेकों लोग हो गए हैं | इस तरह से गाँव-गाँव में प्रचार शुरू हुआ, कीर्तन का शुभारम्भ किया गया | हिन्दू संगठन बढ़ाने की दृष्टि से कीर्तन किया गया और उसमें काफी सफलता भी मिली, गाँवों के बहुत से संगठन सामने आये और ब्रज की सेवा में मदद करने लगे | 'यमुना-यात्रा' में मानमंदिर के प्रबंधकों को गाँव-गाँव से ब्रजवासियों के सहयोग के कारण बहुत सफलता मिली |

प्रश्नकर्ता – मैंने देखा है कि ब्रजयात्रा में कुछ मुस्लिम लोग भी आपके साथ परिक्रमा कर रहे थे |

श्रीबाबा महाराज – हमने मुसलमानों के गाँवों में, मेवात क्षेत्र में भी ब्रजयात्रा निकाली | उस समय विरोध बहुत हुआ | आली ब्राह्मण गाँव में जब पहली बार हम लोग ब्रज परिक्रमा लेकर गए तो मुसलमानों ने रोक दिया | दुर्वासा- कुण्ड के जिस मार्ग से हमें परिक्रमा करनी थी, उस रास्ते से उन लोगों ने हमें जाने नहीं दिया | हमने उनसे लड़ाई नहीं की और हारकर चले आये किन्तु यह सोच लिया था कि अगले वर्ष दुर्वासाजी को प्रणाम करने तो उसी गाँव में फिर से अवश्य जायेंगे | अगले वर्ष पुनः जब हमलोग आली ब्राह्मण में यात्रा लेकर दुर्वासा जी को प्रणाम करने गए तो मैंने मुसलमानों के समक्ष अपने भाषण में कहा कि हिन्दू और मुसलमान अलग-अलग नहीं हैं, तुमलोग हो तो हमारे भाई ही, भले ही तुम मुसलमान बन गए हो किन्तु (मूलरूप से ब्रजवासी होने के कारण) तुम लोग श्रीकृष्ण भक्त हो | मुसलमानों ने जब मेरा प्रवचन सुना तो उन पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि उन लोगों ने स्वयं मेरे पास आकर निमंत्रण दिया कि आप दुर्वासा-कुण्ड के परिक्रमा-मार्ग से हमारे क्षेत्र में होकर यात्रा लेकर निकालिए | एक अच्छा सौहार्द उत्पन्न हुआ | यहाँ तक कि जब हम मेवात-क्षेत्र के एक अन्य गाँव सिंगार (श्रृंगार) की ओर जा रहे थे तो उससे पहले लोगों ने मुझसे मना किया कि महाराज ! उधर मत जाओ, वहाँ मुसलमानों की गलियाँ हैं, आपकी यात्रा पर हमला हो जाएगा किन्तु मैंने कहा कि भगवान् रक्षा करेंगे और हम लोग मुसलमानों की गलियों से उनके बीच से होकर निकले परन्तु कोई हमला नहीं हुआ, भगवान् ने रक्षा की, क्यों रक्षा की क्योंकि मेरे मन में मुसलमानों के प्रति कोई द्वेष नहीं था; इसी भावना के कारण मैंने वहाँ के लोगों के समक्ष कोई विघटन की बात नहीं की, एकता और प्रेम की बात कही, उसका मुसलमानों पर प्रभाव पड़ा और उन्होंने हमारी यात्रा को कुण्ड से होते हुए अपने क्षेत्र से निकालने की अनुमति दे दी, जब ऐसा हो गया तो फिर हर साल यात्रा उस गाँव में जाने लगी | भगवन्नाम की आराधना-शक्ति से ब्रजभूमि के समस्त सेवा-कार्य सहज होते जा रहे हैं |

विशुद्ध शिक्षा-प्रदायिका 'भारतीय संस्कृति'

कनाडा में टी. वी. चैनल से साध्वी मुरलिकाजी की वार्ता

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी हेमाजी, मानमन्दिर, बरसाना

कुछ महीने पूर्व मानमन्दिर की व्यासाचार्या साध्वी मुरलिकाजी अमेरिका और कनाडा में प्रचार हेतु गयी थीं, वहाँ के प्रसिद्ध टी.वी.चैनल द्वारा उनका इंटरव्यू लिया गया था, यहाँ प्रस्तुत है उसी इंटरव्यू का विवरण –

प्रश्नकर्ता – भगवद्गीता का जो मकसद (उद्देश्य) है, वह यदि हमें समझ में आ जाये तो आपने जिस स्वार्थ का जिक्र किया, जैसे आप बिल्कुल बेख़ौफ़ होकर जो यह निष्कामता की बात कह रहीं हैं, वह एक झलक डालती है, यही प्रचार जब आप अन्य लोगों के सामने करतीं हैं कि उनमें यह आस्था बने और मजबूती से इस बात से जुड़ जायें कि हमें जो भी करना है यदि हम निःस्वार्थ भाव से करेंगे तो उसका परिणाम अच्छा ही होगा | आपने कहा है कि आपके जो बाबा जी हैं, उनका उद्देश्य है - निःस्वार्थ सेवा करना | यह आपने एक बहुत बड़ी बात कही - निःस्वार्थ होकर के काम करना | आज चाहे हम धार्मिक लोगों की बात करें, चाहे आम इंसान की बात करें, कुछ न कुछ स्वार्थ पीछे जरूर जुड़ जाता है और अपेक्षा लोगों की भी यही हो गयी है कि जो धार्मिक व्यक्ति है, वह कुछ क्रियायें करवाता जाये, कुछ मन्त्र पढ़ दे, मैं जो मर्जी आये करूँ केवल मुझे उस धार्मिक क्रिया अथवा मन्त्र का फल मिल जाये, ऐसी अपेक्षा एक आम इन्सान रखता है कि मैं कुछ देर पाठ-पूजा कर लूँ, जो धार्मिक कार्य करने वाला व्यक्ति है, वह कुछ मन्त्र पढ़े और मुझे उसका फायदा हो जाए; इस सोच के साथ आज हमारा जीवन चल रहा है और जो हम कर्म कर रहे हैं, जैसे - कोई व्यापार (बिजनेस) करता है, कोई नौकरी करता है, अब जब हम भारत को देखते हैं तो जितना मान हमें अपने धार्मिक ग्रन्थों पर है, जैसे आपने एक बात कही कि भगवद्गीता के अंदर जीवन का रहस्य मिल जाता है, यदि हम इसे समझ लें | इतना अधिक भंडार तो हमारे पास ग्रन्थों का है | आज हम अगर भारत को देख रहे हैं तो इसके मूल में इसकी आध्यामिकता ही छिपी है | थोड़ा-सा आप यह बतायें कि जो कार्य आप कर रही हैं, तो आपके बाबाजी जो संदेश देते हैं, वह क्या है और आप जो बेबाकी से लोगों को संदेश देती हैं कि आप इन चीजों (भौतिक विकारों, दुर्गुणों) से बाहर निकलें, क्योंकि एक व्यक्ति जो धर्म की बात करता है, वह तो उलझी हुई बातें ज्यादा करता है ताकि लोग उसमें उलझ कर ही रहें, उन्हें जीवन का रास्ता अपने आप पता न चले परन्तु आपकी बातों से मुझे कुछ और झलक रहा है और मैंने आपको सुना भी है, तो इन दोनों चीजों के बारे में आप हमें बताइये कि आपका मुख्य संदेश क्या है, आपके बाबाजी क्या कहते हैं और कैसे यह संदेश आप आगे लेकर के जा रहीं हैं?

मुरलिकाजी – बड़ा अच्छा प्रश्न आपने किया क्योंकि आज सबसे बड़ी समस्या तो हमलोग इसलिए देख रहे हैं क्योंकि आज शासकों के अंदर, वक्ताओं के अंदर, जो कि समाज के मुखिया हैं, मुख्य लोग हैं, उनके अंदर स्वार्थ की भावनाएँ आ गई हैं | जब तक हमारे अंदर स्वयं स्वार्थ है तब तक हम निःस्वार्थ भाव से सिद्धांत को रख नहीं सकते क्योंकि जब हमारे अंदर कुछ चोरी है तो हम उन चीजों को उलझाकर, उन बातों को घुमा-फिरा कर बार-बार धन की महिमा, दान की महिमा आदि वही सब कहेंगे | एक छोटा-सा उदाहरण, हमारे यहाँ गौशाला में ५५ हजार गायें हैं लेकिन हम लोग कहीं से चंदा नहीं करते, कभी किसी से दान नहीं माँगते और बड़े आराम से वह गौशाला चल रही है केवल एक महापुरुष के निःस्वार्थ भाव के कारण | जबकि साधारण घरों में देखो तो चार लोगों का जीवन-यापन करना मुश्किल हो जाता है, एक परिवार को चलाना मुश्किल हो जाता है क्योंकि जीव का स्वार्थ इतना प्रधान हो जाता है, कोई भी धर्म आप लोग देख लो - चाहे वह मातृ-धर्म हो, पितृ-धर्म हो, बालक का धर्म, गुरु का धर्म, शिष्य का धर्म- सबके अंदर स्वार्थ है | हमारे यहाँ ५५ हजार गायें हैं और उसके जो संचालक हैं - एक संत

श्रीब्रजशरणजी महाराज, जिनको यह सेवा दी गई है, वे गौशाला का दूध तक नहीं पीते हैं और ऐसे निःस्वार्थ भाव से सेवा करते हैं, एक हजार कर्मचारी उनके नीचे काम करते हैं, उनके चेहरे पर कभी भी शिकन या तनाव की एक रेखा भी नहीं दिखाई देती, इतना आराम से वह काम करते हैं क्योंकि उनके अंदर कोई स्वार्थ नहीं है | महाभारतकाल में विदुरजी थे, वह एक निःस्वार्थ और स्पष्ट वक्ता थे, दुर्योधन ने उनका बहुत अपमान किया, उनके जीवन में बहुत-सी विषमताएँ आई, दुर्योधन ने उन्हें भरे दरबार में सबके सामने गालियाँ दीं कि यह तो दासीपुत्र है, इसे यहाँ किसने बुलाया? इस प्रकार बहुत अपमानित किया लेकिन विदुरजी के अंदर कोई स्वार्थ नहीं था, उसी दिन प्रधानमंत्री पद के प्रतीक अपने धनुष को द्वार पर रख दिया और ३६ साल तक तीर्थयात्रा करने के लिए चले गये | ३६ वर्ष तीर्थयात्रा करने के बाद पुनः हस्तिनापुर आये लेकिन स्वार्थ से नहीं केवल धृतराष्ट्र का कल्याण करने के लिए निःस्वार्थ भाव से आये | इसलिए केवल निःस्वार्थ भाव ही जगत का कल्याण कर सकता है, जगत का हित कर सकता है | स्वार्थपरक भावनायें तो बहुत समेट देंगी, संत है तो केवल मठ-मन्दिर, आश्रम तक ही रह जायेंगे, शासक हैं तो अपने घर-परिवार, कोठी-बंगले तक ही रह जायेंगे | जब तक हमारी स्वार्थहीन भावनायें नहीं होंगी तब तक हम जगत का हित नहीं कर सकते और सबसे दुःख की बात तब लगती है जब हमारे देश में यह बहुत दुःखद परिस्थिति है, जब हम नेताओं के मुख से, शासकों के मुख से और संतों के मुख से भी यह सुनते हैं कि हम तो धर्मनिरपेक्ष हैं | यह धर्मनिरपेक्षता क्या है? धर्मनिरपेक्ष राज्य था हिरण्यकशिपु का | तुम धर्मनिरपेक्ष हो, इसका मतलब क्या असुरों का राज्य-शासन फैला रहे हो? धर्म किसको कहते हैं? मनुस्मृति के अनुसार जो धारण करे, उसको धर्म कहते हैं | **"यतो धर्मस्ततो जयः"** जहाँ धर्म है, वहाँ विजय है | **"धर्मो रक्षति रक्षितः"** हम धर्म की रक्षा करेंगे तो धर्म हमारी रक्षा करेगा | पता नहीं किस सिद्धांत के बल पर लोग कह देते हैं कि हम धर्म- निरपेक्ष हैं | बड़े-बड़े धर्माचार्य लोग अपने को धर्म- निरपेक्ष बता देते हैं | आप पन्थ-निरपेक्ष हो जाओ, आप सम्प्रदाय-निरपेक्ष हो जाओ परन्तु धर्म-निरपेक्ष आप कैसे हो सकते हो? धर्म-निरपेक्ष होने का मतलब तो पूरा आसुरी शासन हो गया और जब धर्म-निरपेक्षता की बातें हमारे मुखियाओं के मुख से सुनने को मिलती हैं तो बहुत दुःख होता है | शारीरिक रूप से भारत भले ही स्वतंत्र हो गया है लेकिन विचारों में हम लोग अभी भी पराधीन हैं और यह पाश्चात्य कूटनीति थी | जिस समय हम लोगों ने २००० वर्ष की गुलामी सही और विशेष रूप से अंतिम २५० वर्षों में तो बहुत विनाश हुआ | इतना विनाश तो फ्रांसीसी, पुर्तगाली और मुगलकाल में, मुसलमानों के शासनकाल में भी नहीं हुआ, जितना कि अंग्रजों के समय में हुआ क्योंकि उन्होंने इस तरह की कूटनीति से विनाश किया कि बाकी लोग तो विनाश करके चले गये लेकिन अंग्रेज अपनी विनाशकारी भावनाओं को छोड़कर चले गये | जिस समय लन्दन में ब्रिटेन की संसद में एक प्रस्ताव पारित हुआ, उस समय 'विलियम विटनर फ़ोर्स' नामक एक अंग्रेज सांसद था; उस समय उसने कहा था कि यदि भारतवर्ष को सदा के लिए गुलाम बनाना है तो तीन चीजें यहाँ की नष्ट कर दो, सबसे पहले तो भारत की राजनैतिक-व्यवस्था नष्ट कर दो, भारत की सांस्कृतिक-सम्प्रभुता नष्ट कर दो और भारत की आर्थिक-व्यवस्था नष्ट कर दो | ये तीन चीजें नष्ट हो गई तो भारत कभी भी स्वतंत्र नहीं हो सकता | हमारी सांस्कृतिक-विरासत को नष्ट करने के लिए अंग्रेजों ने हमारी शिक्षा को नष्ट कर दिया, इसके लिए उन्होंने भारत में कान्वेंट स्कूल खोला | सन् १८५८ में कलकत्ता में सबसे पहला कान्वेंट खोला | मैकाले ने अपने पिता को एक पत्र में लिखा था – मैंने भारत में एक ऐसी नींव खोद दी है, जिससे बच्चे भारतीय-शरीर से तो होंगे किन्तु बुद्धि से वे भारतीय नहीं होंगे | इसका परिणाम आज तक है | भारतीय बच्चों को देखो, जब हम उन्हें अपने शास्त्रों-धर्मग्रन्थों की बातें बताते हैं तो वह बात उनके लिए प्रामाणिक नहीं है और कोई पाश्चात्य विचारक कुछ लिख दे तो वह उनके लिए प्रामाणिक हो जाता है | विज्ञान की

बात उनके लिए प्रामाणिक हो जाती है जबकि हमारे शास्त्रों में तो इतना पुराना विज्ञान है कि आज के विज्ञान को तो वहाँ पहुँचने में लाखों साल लग जायेंगे परन्तु उनकी विचारधारा को ही नष्ट कर दिया गया है | हमें सांस्कृतिक रूप से गुलाम कर दिया गया, नष्ट कर दिया गया है | इसके साथ ही अंग्रेजों ने हमारी राजनैतिक व्यवस्था को नष्ट करने के लिए गड़बड़ क़ानून रख दिये | आज भी भारतवर्ष में ३४७३५ क़ानून अंग्रजों के द्वारा बनाये गये हैं, हम लोग उनका पालन कर रहे हैं | उन क़ानूनों में ऐसे-ऐसे गलत क़ानून हैं, जैसे यदि कोई भारतीय व्यक्ति पेड़ लगाता है, उसको काट देता है, नष्ट कर देता है तो उसको जेल हो सकती है किन्तु विदेशी कम्पनियाँ सिगरेट का कागज बनाने के लिए जंगल के जंगल उड़ा दें तो उनके लिए कोई दंड नहीं है, यह किस तरह का कानून है | यही गुलामी है, परतन्त्रता है | इसी प्रकार अंग्रजों ने हमारी आर्थिक व्यवस्था को नष्ट करने के लिए हमारी कृषि को नष्ट कर दिया | वह कृषि गौवंश पर आधारित थी और उसी गौवंश के कारण भारत सोने की चिड़िया था क्योंकि भारत कृषि प्रधान देश था | भारत की समस्त आय, सारी अर्थव्यवस्था गौवंश पर आधारित थी | अंग्रेजों ने रासायनिक यूरिया खाद और ट्रेक्टरों का यहाँ प्रचलन कराया, इसके कारण गौवंश उपेक्षित हो गया | भारत में ३६ हजार कत्लखाने चल रहे हैं, जिनको लाईसेन्स प्राप्त है, बिना लाईसेन्स के तो लाखों कत्लखाने चल रहे हैं | ये क्या है, क्या यह गुलामी नहीं है, अभी तक हम अंग्रेजों के कारनामों का पालन कर रहे हैं | चाणक्य ने अपनी चाणक्य नीति में कहा है – **"धर्मस्य मूलं अर्थम्"** धर्म का मूल अर्थ है | जिस देश की अर्थव्यवस्था मजबूत नहीं होगी, उसका धर्म भी मजबूत नहीं होगा क्योंकि कोई भी काम करने के लिए पैसा तो चाहिए | आज ईसाई और मुसलमान लोग अपने धर्म का प्रचार किस बल पर कर रहे हैं | सऊदी अरब, अमेरिका, यूरोप आदि अत्यंत धन सम्पन्न देश हैं इसलिए ये लोग अपने धर्म को डंके की चोट पर फैला रहे हैं | ईसाई मिशनरी हमारे देश में आकर धर्मांतरण करा रहे हैं, यह कितनी दुःखद बात है और ऐसी स्थिति में हमारे देश के शासक कहें कि हम धर्म निरपेक्ष हैं तो वे शासक हैं कि हत्यारे हैं | ऐसे समय में तुमको अपने धर्म को उठाने की जरूरत है न कि धर्मनिरपेक्ष होने की जरूरत | बाकी देशों को देखो तो कुवैत और बहरीन जैसे बड़े-बड़े शहरों जैसे देश हैं लेकिन डंके की चोट पर कहते हैं कि हम तो मुसलमान हैं और अपने इस्लाम धर्म का पालन कर रहे हैं | आज उन देशों में भी जहां ४० लाख तक हिन्दू होते हैं, अजान जिस समय पढ़ी जाती है, उस समय हिन्दू लोग भी न तो अपना व्यवसाय कर सकते हैं, न नौकरी कर सकते हैं क्योंकि उनको भी यही पालन करना है | कैसी इस्लामिक देशों की अपने धर्म के प्रति निष्ठा है, उनसे हमारा कोई विरोध नहीं है लेकिन एक सीखने की बात है | धर्मनिरपेक्ष अपने आप को क्यों कहते हो? धर्म निरपेक्ष कहने का मतलब दो चीजें हैं | या तो तुम कमजोर हो या तुम मूर्ख हो | अगर ये दोनों चीजें नहीं हैं तो आप अपने आप को धर्म निरपेक्ष नहीं कहोगे | अपने को डंके की चोट पर धर्मसापेक्ष कहो क्योंकि तुम्हारा धर्म इतना विशाल है | यह राम-कृष्ण का धर्म है, जिन्होंने सनातन धर्म की रक्षा हेतु अवतार लिया, इस धर्म की रक्षा की, इसका पालन किया, इसकी प्रतिस्थापना की | हिरण्यकशिपु और रावण अपने को धर्म निरपेक्ष कहें तो चलता है | ऐसे राज्य में ऐसे शासकों को देखकर के बहुत कष्ट होता है, बहुत पीड़ा होती है | अब तो बड़े-बड़े धर्माचार्य और संत लोग भी अपने को धर्मनिरपेक्ष कहने लगे हैं, यह बहुत दुःख की बात है |

प्रश्नकर्ता – आज धर्म निरपेक्षता का जो नारा दिया जा रहा है लेकिन उसके अंतर्गत आज जो चल रहा है | जैसा कि आपने कहा कि धर्म तो जोड़ता है, तोड़ता नहीं है लेकिन आज धर्म के नाम पर जिस तरह की राजनीति खेली जा रही है, उससे भारत के ही लोगों में भय फैलना शुरू हो गया है | हमारे गुरुओं ने तो हमे बताया कि इंसान बनकर जिओ और दुनिया भर में हम **"वसुधैव कुटुम्बकम्"** का संदेश तो देते हैं लेकिन यूनेस्को की रिपोर्ट में कहा जा रहा है कि भारत महिलाओं के लिए आज सुरक्षित नहीं है | भारत में लोगों को

डर है, भारत में एक-दूसरे के खिलाफ़ सोच में जहर बढ़ता जा रहा है तो आप क्या समझती हैं कि कैसे प्रचार किया जाये कि जिससे भावनाओं में बेहतरी आये और इंसान समझकर हम जीना शुरू करें | मुरलिका जी, अब क्या किया जाये? धर्म तो जोड़ता है, तोड़ता नहीं है लेकिन हम तो ये समझते हैं आज धर्म का जिस तरह प्रचार किया जा रहा है कि आप बाहर से तो धार्मिक बन जाओ लेकिन अंदर से आपकी रूचि कुछ और है | आप जोड़ने की बात नहीं कर रहे, आप तोड़ने की बात कर रहे हैं |

मुरलिकाजी – देखिये, सारी चीजें टिकी हैं शिक्षा पर | जब तक हमारी शिक्षा में सुधार नहीं होगा तब तक चाहे MBBS डिग्री ले लो लेकिन वह डॉक्टर भी ऐसा होगा जैसे उसको लोगों को मारने का Registered (अधिकृत) लाईसेन्स मिल गया हो | आज जिनको हम कहते हैं कि बहुत आधुनिक शिक्षा में पढ़े-लिखे बच्चे हैं, बहुत अच्छा पढ़-लिख रहे हैं, वहाँ से भी ऐसे लोग बनके निकलते हैं, जो मृतक शरीर को दो-तीन दिन तक वेन्टीलेटर पर भी रख सकते हैं क्योंकि जब तक शिक्षा में सुधार नहीं होगा तब तक पढ़ने वाला विद्यार्थी किसी भी क्षेत्र में चला जाये, चाहे वह कहीं का धर्माचार्य बन जाये, चाहे आगे चलकर वह संत बन जाये, चाहे वह भविष्य में डॉक्टर-इंजीनियर बन जाये, जब तक शिक्षा शुद्ध नहीं होगी तब तक उसकी विचारधारायें शुद्ध नहीं होंगी | इसलिए आज बहुत अधिक आवश्यकता है शिक्षा को सुधारने की | कोई समय था, जब भारतवर्ष की शिक्षा इतनी सुंदर थी कि उसको पढ़ने के बाद कहीं से कोई विवेकानन्द निकलता था, कहीं से कोई लक्ष्मीबाई निकलती थी, चाहे वीरता के क्षेत्र में देख लो, चाहे प्रचार के क्षेत्र में देख लो, चाहे राजनीति के क्षेत्र में देख लो, चाहे धर्म के क्षेत्र में देख लो, किसी भी क्षेत्र में देख लो | उस समय अच्छे-अच्छे लोग निकलते थे लेकिन यह हम लोगों का दुर्भाग्य है बल्कि मैं फिर से यह कहूँगी कि यह हम लोगों की गुलामी है कि हम लोग पाश्चात्य शिक्षा से प्रभावित होके अपने संस्कारों को, अपनी संस्कृति को बहुत खो रहे हैं | हमारे बच्चों को आज हिन्दी बोलने में शर्म आती है | सबसे पहली बात यह कि हमने बच्चों को अपनी मातृभाषा से अलग कर दिया, बच्चों को अंग्रेजी स्कूलों में पढ़ाने में, उन्हें विदेश भेजने में अपना गौरव समझते हैं, अपनी प्रगति, अपना विकास समझते हैं | जबकि वह विकास नहीं, सर्वनाश है, निश्चित रूप से विनाश है | प्राचीन भारत में गुरुकुल प्रणाली थी, जहाँ बच्चे गुरुकुल में जाकर के पढ़ते थे, भगवान् श्री राम-कृष्ण भी गुरुकुल गये थे और यह १८५८ में स्वयं अंग्रेजों ने सर्वेक्षण किया था कि भारतवर्ष के साढ़े सात लाख गाँवों में सात लाख पैंतीस हजार गाँवों में गुरुकुल थे | प्रायः हर गाँव में शिक्षा की व्यवस्था थी | उत्तर भारत में ९७ प्रतिशत जनता साक्षर थी, दक्षिण भारत में १०० प्रतिशत लोग साक्षर थे १८ वीं सदी तक, १५० साल पहले तक | तब अंग्रेजों ने भारत को नष्ट करने के लिए यह योजना बनायी कि इन गुरुकुलों को गैरकानूनी घोषित कर दो | जब गुरुकुल गैरकानूनी हो जायेंगे तो दान देने वाले दान नहीं देंगे और फिर ये गुरुकुल कब तक चलेंगे, ये सब अंत में बंद हो जायेंगे | इस तरह अंग्रेजों द्वारा हमारी गुरुकुल प्रणाली पर बहुत अत्याचार किया गया और फिर पाश्चात्य सभ्यता को सिखाने के लिए उनके द्वारा भारत में कान्वेंट स्कूल खोले गये | यह हम लोगों को बर्बाद करने की साजिश थी और इस साजिश के तहत आज हम लोग स्वयं अपने आपको बर्बाद कर रहे हैं | माता-पिता को ही देखा जाये तो उनके जीवन में आज अध्यात्म कहाँ रह गया है | बालकों के साथ स्वयं माता-पिता ही टी.वी पर फ़िल्में, चित्रहार और अन्य दूषित,अश्लील कार्यक्रम देखा करते हैं, उससे निश्चित है कि आपके संस्कार कहीं न कहीं प्रभावित होते हैं, अभी आपको दिखाई नहीं दे रहा है, आपका चार वर्ष का बालक आपके साथ बैठकर टी.वी पर अश्लील फ़िल्में-चित्रहार आदि देख रहा है, हो सकता है १५, १६ और १८ साल का होने के बाद किसी के साथ बलात्कार करे, वही बालक लड़कियों के साथ दुर्व्यवहार करे क्योंकि बचपन से ही आप लोगों ने उसके संस्कारों को दुष्प्रभावित कर दिया | हमारी प्राचीन भारतीय प्रणाली में ५ से २५ वर्ष तक बच्चा गुरुकुल में रहता था, वहाँ उसको आध्यात्मिक शिक्षा दी जाती थी, वेद-उपनिषद शास्त्र उसे पढ़ाये जाते थे, राजनीति की शिक्षा में, धर्म की शिक्षा में, युद्ध की शिक्षा में, हर प्रकार की शिक्षा में उसको पारंगत किया जाता था |**.........क्रमशः**

पाश्चात्य-संस्कृति से हुआ 'भारतीय-संस्कृति' का ह्रास

स्वदेशी आन्दोलन के प्रणेता- स्वर्गीय राजीवदीक्षितजी की वाणी से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी गोपिकाजी, मानमन्दिर, बरसाना

(गतांक 'मई २०१९ पेज – ३२' पर दिए गए प्रसंग का अगला भाग)

राजीवदीक्षितजी के शब्दों में – "यूरोप के आधुनिक दार्शनिकों में एक नाम आता है - रूसो, वह फ्रांस का था, उसके पाँ बच्चे पैदा हुए, चार बच्चों को उसने इसी तरह घर के बाहर छोड़ दिया टोकरी में रखकर, जिनमें दो बच्चों को कुत्ते खा गये और दो बच्चों को अनाथाश्रम वाले ले गए | यूरोप में यह बहुत प्राचीन परम्परा है - बच्चों को लावारिस छोड़ना, क्यों लावारिस छोड़ते थे तो इसके लिए यूनान देश का (यूरोप का) सबसे प्राचीन दार्शनिक प्लेटो कहता है - "स्त्री-पुरुष के आनंद के क्षणों में बच्चे बाधा हैं, इन्हें घर पर मत रखो |" यह प्लेटो की शिक्षा है, वह कहता है कि बच्चों को घर पर रखना ठीक नहीं है क्योंकि जीवन का चरम उद्देश्य आनंद प्राप्त करना है और वह आनंद भी स्त्री-पुरुष का शारीरिक सुख प्राप्त करना है, जीवन इसी के लिए मिला है कि हम शारीरिक आनंद प्राप्त करें और बच्चे इसमें बाधा हैं, इसलिए बच्चों को घर पर नहीं रखना चाहिए, उन्हें बाहर छोड़ देना चाहिए; इसीलिए यूरोप में बच्चों को लावारिस छोड़ने की पुरानी परम्परा है, वहाँ बच्चे छोड़ दिये जाते हैं और यह नियम है कि राजा या सरकार व्यवस्था करे ऐसे छोड़े हुए नाजायज बच्चों की | इसके लिए राजा कुछ संस्थायें खड़ी करता है, इन संस्थाओं को 'कॉन्वेंट ' कहते हैं | 'कॉन्वेंट' का अर्थ है लावारिस, अवैध सम्बन्धों से उत्पन्न बच्चों को पालने वाली संस्था, लावारिस बच्चों के स्कूल; इसीलिए यूरोप में ये कॉन्वेंट चलाये जाते हैं | 'मैकाले' ब्रिटेन की संसद में कहता है कि हम भारत में भी ये कान्वेंट चलाएँगे, उसके ऐसा कहने पर एक अंग्रेज सांसद ने पूछा कि क्या भारत में कोई अनाथ होता है तो मैकाले ने कहा कि वहाँ बच्चा अनाथ नहीं होता लेकिन हम बनायेंगे | भारत में तो यदि किसी बच्चे के माता-पिता मर जायें तो संयुक्त परिवार में उसके चाचा-चाची, ताऊ-ताई, मामा-मामी, मौसा-मौसी, बुआ-फूफा इनमें से कोई भी बच्चे का पालन-पोषण करता है | यूरोप में तो माता-पिता होने पर भी बच्चे को छोड़ देते हैं | इसलिए यूरोप में लावारिस बच्चों को पालने के लिए कान्वेंट खड़े किये जाते हैं | कान्वेंट को चलाने के लिए ज्यादातर ईसाई संस्थायें होती हैं, वहाँ चर्च होता है, राजा 'चर्च' को दान देता है, उस पैसे से कान्वेंट का निर्वाह होता है | भारत में सबसे पहला कान्वेंट मैकाले ने कलकत्ता में खुलवाया लेकिन उस कान्वेंट में कोई पढ़ने नहीं आता था तो उसने दूसरा कानून बनवाया कि जो भारतीय, ईस्ट इंडिया कम्पनी और भारत सरकार की नौकरी करेंगे और कलकत्ता में रहेंगे, उनके लिए अपने बच्चों को कान्वेंट स्कूल में भेजना आवश्यक है, नहीं तो उनकी नौकरी चली जायेगी | इसलिए जो भारतीय ईस्ट इंडिया कम्पनी और ब्रिटिश सरकार के अंतर्गत नौकरी करते थे, उन्होंने जबरदस्ती अपने बच्चों को कान्वेंट में भेजना शुरू किया, धीरे-धीरे एक कान्वेंट से दो कान्वेंट हुए फिर दो से तीन और इस तरह धीरे-धीरे सौ हो गए और अब तो हजारों कान्वेंट हो गए हैं | अब भारत में एक भी ऐसा गाँव नहीं है जहाँ कान्वेंट स्कूल न हों | मैकाले ने इस तरह कान्वेंट के रूप में भारत में एक भयानक विष का बीज डाल दिया, जो वट वृक्ष बनकर अब फ़ैल गया है | अब तो इस देश में ऐसे-ऐसे कान्वेंट स्कूल खुल गए हैं, जैसे - एक कान्वेंट का नाम है – 'बजरंगबली कान्वेंट स्कूल |' मुंबई में ग्रांड रोड के पास रेलवे स्टेशन

से बिलकुल सटा हुआ है, बजरंगबली कान्वेंट स्कूल | एक दूसरा है - संतोषी माता कान्वेंट स्कूल, एक है - सरस्वती देवी कान्वेंट स्कूल, बैंगलौर में एक महावीर स्वामी कान्वेंट स्कूल खोला गया है; इन कान्वेंट स्कूल चलाने वालों से पूछना चाहिए कि भला 'बजरंगबली' का कान्वेंट स्कूल से क्या रिश्ता है या 'सरस्वती देवी' कब कान्वेंट स्कूल में पढ़ने गई थीं, मूर्खों के मूर्ख इस देश में पैदा हो गये; ये न तो अंग्रेज हैं, न हिन्दुस्तानी हैं, खिचड़ी बनके भारतीय समाज में पड़े हैं | इस खिचड़ी में से न आप चावल निकाल सकते हैं, न मूंग की दाल का दाना निकाल सकते हैं; इन खिचड़ी लोगों ने हमारे देश का सत्यानाश कर दिया; ये सब मैकाले की संतानें हैं | रिकार्ड्स बताते हैं कि जब अंग्रेज भारत छोड़कर गए थे तो १५ अगस्त १९४७ तक देश में ३५० कान्वेंट स्कूल थे, अब यदि ये ३० से ३५ हजार हो गए हों तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है | अब यूरोप में जो कॉन्वेंट स्कूल हैं, वैसा ही शिक्षण-अध्यापन इन भारतीय कॉन्वेंट स्कूलों में हो रहा है | जैसा कि पहले ही बताया गया कि यूरोप में कॉन्वेंट स्कूल का मतलब होता है, लावारिस बच्चों का स्कूल, अतः वहाँ जो बच्चे पढ़ने आते हैं उनको सिखाया जाता है कि यह जो अध्यापक है, यह फादर (father) पिता है, यह मदर (mother) माता है | क्योंकि असली फादर-मदर अर्थात माता-पिता का पता नहीं है, बच्चा लावारिस है, कौन है उसका बाप, कौन है उसकी माँ, इसका कुछ पता नहीं है | इसलिए कान्वेंट स्कूलों में पढ़ाने वाले पुरुषों को फादर कहते हैं, वृद्ध अध्यापक है तो फादर और युवा अध्यापक है तो उसको ब्रदर कहते हैं और बूढ़ी अध्यापिका को मदर और युवा अध्यापिका को सिस्टर कहते हैं; ऐसा कान्वेंट में बच्चों से बुलवाया जाता है | हम भारतवासियों ने बिना सोचे-समझे ही इसकी नक़ल कर लिया | हमारे यहाँ तो घर में असली फादर-मदर (माता-पिता) हैं और कान्वेंट स्कूल में बच्चा जाता है तो वहाँ नकली फादर-मदर (माता-पिता) होते हैं और वहाँ बच्चे को अध्यापक-अध्यापिकाओं को फादर-मदर ही बोलना पड़ता है | भारतीय परम्परा में किसी बच्चे की दो माताएँ तो हो सकती हैं, दो बाप नहीं हो सकते हैं | भगवान् कृष्ण की दो माताएँ थीं - यशोदाजी तथा देवकीजी | एक ने जन्म दिया, एक ने पाला | रामचंद्र जी कहते थे कि मेरी तीन माताएँ हैं, एक ने जन्म दिया, बाकी दो मुझे माता की तरह स्नेह करती हैं इसलिए भारतीय संस्कृति में माताएँ दो-तीन हो सकती हैं किन्तु पिता दो नहीं होते | कान्वेंट में पढ़ने वाले नौनिहालों के प्रत्येक के दो-दो माँ-बाप हो जाते हैं - एक घर पर है असली, दूसरे कॉन्वेंट में हैं नकली | अंग्रेजी में एक शब्द है 'बास्टर्ड', जो गाली की तरह इस्तेमाल किया जाता है, बास्टर्ड वही होता है जिसके दो बाप होते हैं | हमलोगों ने अपने बच्चों को कान्वेंट स्कूलों में भेजकर बास्टर्ड बनाने का धंधा शुरू कर दिया है और बड़े गर्व से कहते हैं कि मेरा बच्चा 'सेंट मैरी कान्वेंट' में अध्ययन करता है, जीसस कान्वेंट में, सेंट जोसेफ कान्वेंट में पढ़ने जाता है; इन कान्वेंट स्कूलों में बड़ी ही विचित्र चीजें सिखाई जाती हैं | आजकल कान्वेंट स्कूलों में सिखाया जाता है कि 'वैलेंटाइन डे सेलीब्रेट करो' अर्थात् मनाओ | यह 'वेलेन्टाइन डे' का किस्सा क्या है ? जैसा कि कहा जा चुका है कि यूरोप में बच्चों को साथ रखने की परम्परा नहीं है, इसी प्रकार वहाँ एक और बहुत खराब परंपरा है बिना विवाह के स्त्री-पुरुष के साथ रहने की, इसे कहते हैं 'लिव इन रिलेशनशिप' अर्थात् शादी तो करनी नहीं है लेकिन साथ रहना है और ऐसा क्यों है क्योंकि छुटकारा आसान है, सुबह भोग किया और शाम को निकल गए, किसी दूसरे के घर में घुस गए, फिर तीसरे के, फिर चौथे के, जैसे कुत्ते घूमते रहते हैं | ऐसे ही ये यूरोपियन या पाश्चात्य सभ्यता के नीच लोग कुत्ते-कुतिया की तरह

भोगपरायण बने रहते हैं; इनकी इस 'लिव इन रिलेशनशिप' का अभिप्राय है – 'कुत्ता- संस्कृति' लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि भारतीय कुत्तों से भी ज्यादा खराब हैं 'यूरोपियन कुत्ता संस्कृति' | भारतीय कुत्ते फिर भी थोड़े वफादार होते हैं, यूरोप वाले तो इतने भी नहीं हैं, उनके यहाँ 'लिव इन रिलेशनशिप' का चक्कर बहुत है | आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि पहले से आज तक यूरोप की ७०% प्रजा बिना शादी के रहती है | आप यूरोप के शहरों लन्दन, पेरिस आदि में आज भी यह स्थिति देख सकते हैं, अमेरिका में ७८% लोग बिना शादी के रहते हैं, इसलिए स्त्रियाँ बदलती रहती हैं, जिनको वहाँ के लोग विचित्र नामों से संबोधित करते हैं | इंग्लैण्ड में एक नाम चलता है - mrs (मिसेज), जैसे - मिसेज लॉयड, मिसेज थैचर...आदि-आदि इसका तात्पर्य है कि यह महिला उस पुरुष की रखैल है | 'मिसेज लॉयड' माने लॉयड नामक व्यक्ति की रखैल, 'मिसेज थैचर' माने थैचर नामक व्यक्ति की रखैल | 'मिसेज' अर्थात् विवाहित पत्नी को छोड़कर कोई भी महिला जिसके साथ पुरुष बिस्तर पर शयन करता है; पश्चिमी देशों का यही सारा खेल है, वहाँ स्त्रियाँ तो बिना शादी के पुरुषों के साथ रहती हैं, पुरुष भी बिना शादी के स्त्रियों के साथ रहते हैं | कभी-कभी यूरोपियन लोगों को कुछ अच्छे विचार भी आ जाते हैं | चौथी शताब्दी अर्थात् आज से सोलह सौ वर्ष पूर्व रोम में एक व्यक्ति पैदा हुआ, उसका नाम था – वैलेन्टाइन, वह चर्च का पादरी बन गया, उसने कुछ भारत का साहित्य पढ़ा क्योंकि भारतीय साहित्य बहुत जगह फैला हुआ है | भारतीय साहित्य को पढ़ने से 'वैलेन्टाइन' नामक पादरी के विचार बदल गए, इसलिए उसने अपने देश के लोगों से कहा कि सबको शादी करके ही साथ रहना चाहिए और वह गाँव-गाँव घूमकर यह प्रचार करने लग गया कि शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करना ही है तो पहले विवाह करो | उस समय रोम में एक 'क्लौडियस' नामक राजा था, उसने कहा कि आप यह क्या बकवास करते हैं? 'वैलेन्टाइन' कहता था कि यह बकवास नहीं है, बहुत अच्छी जीवन-पद्धति है, सम्पूर्ण भारत में यही पद्धति चलती है, वहाँ के लोग बहुत अच्छे हैं, स्त्रियाँ बहुत अच्छी हैं; आप भी इसे अपना लो तो बहुत अच्छा होगा, इससे बीमारियाँ कम हो जायेंगी, समाज व्यवस्थित हो जायेगा | इसलिए 'वेलेन्टाइन' गाँव-गाँव में घूमकर यही प्रचार करता था कि शादी करो, लेकिन राजा उसे रोकता था कि शादी क्यों करें ? हमारी तो यही परम्परा है कि बिना शादी के रहें, आगे चलकर राजा और वेलेन्टाइन का झगड़ा हुआ | 'वेलेन्टाइन' का यह कार्य था कि जो भी स्त्री-पुरुष विवाह के लिए तैयार होते थे, उसको वह अपने चर्च में बुलाता था और उसकी शादी करता था, यह सिलसिला उसने २०-२५ साल तक चलाया, वहाँ का राजा इससे बहुत परेशान हो गया | एक दिन उसने 'वेलेन्टाइन' को फाँसी पर लटकाने का आदेश दे दिया | १४ फरवरी सन् ४९८ में वेलेन्टाइन को फाँसी पर लटका दिया गया, जिन लोगों की शादियाँ उसने कराई थीं, वे लोग उसकी मृत्यु से बहुत दुःखी हो गये, उसकी याद में उन लोगों ने 'वैलेन्टाइन डे' मनाना शुरू कर दिया; इसीलिए यूरोपियन लोगों के कान्वेंट में 'वेलेन्टाइन डे' मनाया जाता है, अब भारत के स्कूलों में भी 'वैलेन्टाइन डे' मनाया जाता है जबकि भारत में शादी करके रहने में कोई समस्या ही नहीं है, यूरोप में तो शादियाँ ही नहीं होती हैं इसीलिए वेलेन्टाइन ने शादी की प्रथा प्रारम्भ की और राजा ने उसे मरवा दिया तो जिनको उसने शादी की उपयोगिता से परिचित करवाकर विवाह करवाया, वे लोग 'वेलेन्टाइन डे' मनाया करते हैं, लेकिन भारत के लोगों के साथ ऐसी कोई समस्या नहीं है फिर भी 'वैलेन्टाइन डे' मनाने लगे हैं | आजकल कान्वेंट स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे 'वैलेन्टाइन डे' के

कार्ड खरीदते हैं, अपनी माँ को देते हैं, उस पर लिखा होता है - would you be my valentine ? (क्या आप मेरी वैलेंटाइन बनेंगी?) पिता को भी यही कार्ड देते हैं, उस पर भी यही सन्देश लिखा होता है; इन मूर्खों को यह पता ही नहीं कि 'वैलेन्टाइन' कौन था और 'वैलेंटाइन डे' मनाने का मतलब क्या है? कुछ दिन पहले मैं मुंबई में एक बुजुर्ग आदमी से मिला, जिनकी उम्र ७५ वर्ष है, उनके पास 'वैलेन्टाइन डे' पर १८ ग्रीटिंग कार्ड आये, जिसमें एक ही बात लिखी थी - would you be my valentine ? ऐसा अधकचरापन है और यह सब मूर्खतापूर्ण शिक्षा 'कान्वेंट स्कूलों' में पढ़ने वाले भारतीय बच्चे आजकल सीख रहे हैं और इन 'कान्वेंट स्कूलों' ने भारतीयों को क्या-क्या सिखा दिया...!! मैकाले ने कहा था कि ये जो कान्वेंट स्कूल हम भारत में चलायेंगे, इनमें शिक्षा मिलें न मिले लेकिन हम भारत में अंग्रेजियत के संस्कार जरूर देंगे | भारतवासी जितने साल इन कान्वेंटों में पढ़कर निकलेंगे तो देखने में वे भारतीय प्रतीत होंगे परन्तु आत्मा से अंग्रेज हो जायेंगे फिर ये ही हमारी मदद करेंगे और भारत को गुलाम बनाये रखने में सहयोग करेंगे | अंग्रेजों को तो अपना संस्कार देना था तो 'कान्वेंट स्कूल' के माध्यम से, जिसमें वे सफल रहे, आज भी लोग सीख रहे हैं | (इस कान्वेन्ट शिक्षा का प्रभाव भारतवर्ष में इतना पड़ा है कि देश की सर्वोच्च न्यायिक संस्था 'सुप्रीम कोर्ट' ने भारतीय दण्ड विधान की धारा ३७७ को निरस्त कर दिया है, जिसमें विधान किया गया था कि यदि कोई प्राकृतिक नियम के विरुद्ध किसी स्त्री, पुरुष या जानवर से अप्राकृतिक मैथुन करता है तो उसे आजीवन कारावास तक की सजा से दंडित किया जा सकता है | सुप्रीम कोर्ट का यह निर्णय आया तो अनेक गणमान्य लोग तथा अनेकों संस्थायें इस प्रकार उस निर्णय का स्वागत कर रहे थे जैसे उन्हें दुनिया की सबसे बड़ी दौलत मिल गयी हो | सुप्रीम कोर्ट के उस निर्णय के अनुसार अब दो पुरुष अथवा दो स्त्रियाँ आपस में एक-दूसरे से विवाह करके पति-पत्नी के रूप में रह सकते हैं और अप्राकृतिक मैथुन करने के लिए स्वतंत्र हैं | उसी प्रकार एक दूसरे निर्णय में सुप्रीम कोर्ट ने भारतीय दंड विधान की धारा ४९७ को अवैध घोषित कर दिया है जिसमें कहा गया था कि किसी विवाहिता स्त्री से उसके पति की इच्छा के विरुद्ध यदि कोई व्यक्ति शारीरिक सम्बन्ध बनाता है तो उसे ५ वर्ष तक के कारावास से दंडित किया जा सकता है | अब स्थिति यह हो गई है कि कोई भी विवाहित महिला अपने पति की इच्छा के विरुद्ध चाहे कितने भी पुरुषों से सम्बन्ध बना सकती है और उस पुरुष के विरुद्ध कोई भी कानूनी कार्यवाही सम्भव नहीं है | इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि भारतवर्ष की सभ्यता-संस्कृति के दृष्टिगत भारतीय दंड संहिता में उपरोक्त धाराओं का समावेश अंग्रेजों ने ही किया था | इस प्रकार यह स्पष्ट है कि कान्वेन्ट शिक्षा से हमारे देश की सभ्यता और संस्कृति का इस कदर विनाश हुआ है कि हम जानवरों की श्रेणी से भी नीचे जा चुके हैं |) कान्वेंट में उन्होंने बच्चों को 'वैलेन्टाइन डे' सिखा दिया, फिर उन्होंने मदर्स डे, फादर्स डे मनाना सिखा दिया | अब जानिये कि यूरोप में 'मदर्स डे' क्यों मनाया जाता है ? जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि यूरोप में प्लेटो के समय से बहुत खराब परम्परा चली आ रही है कि बच्चे पैदा होते हैं तो उन्हें घर पर तो रखना नहीं है, बाहर छोड़ देना है अतः उन बच्चों को माँ का दूध नहीं मिल पाता है इसलिए चर्च में जो सिस्टर होती है, वे अनाथ बच्चों को अपना दूध उपलब्ध कराती हैं | अब आपको यह शंका होगी कि ऐसा कैसे संभव हो सकता है क्योंकि नर्स या सिस्टर माँ तो नहीं बनी, उसके स्तनों में दूध कहाँ से आ गया किन्तु आधुनिक विज्ञान ने अब ये सिद्ध कर दिया है कि कोई बच्चा लगातार दो-तीन दिन तक किसी अविवाहित महिला का स्तन पान करे तो दूध आना प्रारम्भ हो जाता है | यूरोपीय देशों में स्तनपान और बच्चे का पालन-पोषण सिस्टर या नर्स के द्वारा किया जाता है, माँ नहीं करती है लेकिन साल में कभी-कभी एक दिन वे लोग 'मदर्स डे' मनाते हैं जिस दिन असली माँ अपने बच्चे को दूध पिलाने के लिए कान्वेंट में जाती है, इसलिए उस दिन उनके यहाँ mother's day (मदर्स डे) मनाया जाता है |.....**क्रमशः**

भगवन्नाम-रसास्वादन में बाधक 'विषय-भोग'

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'नाम-महिमा' (२६/०५/२०१०) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी चन्द्रमुखीजी, मानमन्दिर, बरसाना

भगवन्नाम बहुत मीठा है –

आखर मधुर मनोहर दोऊ ।
बरन बिलोचन जन जिय जोऊ ॥

(श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड- २०)

मधुराष्टक में भी कहा गया है कि भगवान् का सब कुछ मीठा है – '**अधरं मधुरं, वदनं मधुरं, नयनं मधुरं हसितं मधुरम् | हृदयं मधुरं ......**' | उस मिठास का अनुभव हमें क्यों नहीं होता है ? सांसारिक विषय-भोगों में प्रेम के कारण ही हम लोगों को भगवान् के नाम-रूप-लीला-धाम-जन आदि में प्रीति नहीं होती है | अनादिकाल से हमारे चित्त में जो कषाय (विषयों का आवरण) हैं, इससे सबसे ज्यादा नुकसान ये है कि हमारे अंतःकरण में एक ऐसा अँधेरा फैला देते हैं; जिससे परमार्थ की वस्तु भासती (दिखती) नहीं है | जितने भी प्रकार की चेतनाएँ, रोशिनियाँ, प्रकाश हैं, वे सब अंधकार में नष्ट हो जाती हैं | इसलिए भगवान् के रस की बातें (कथा-कीर्तन की चर्चा) न तो हमारे अनुभव में आती हैं, न ही उन बातों पर विश्वास होता है | लड्डू, पेड़ा, विषयों में विश्वास क्यों होता है ? क्योंकि उस विषय में जो क्षणिक मधुरता का आभास है, वह अनुभव में आती है पिछले अभ्यास के कारण से | जैसे कोई व्यक्ति तम्बाकू का नशा करता है, उसको तो तम्बाकू खा लेने पर कुछ भी नहीं होगा लेकिन अगर हम लोग तम्बाकू को खा लेंगे तो चक्कर खाकर गिर पड़ेंगे | धीरे-धीरे अभ्यास से उस व्यक्ति को तम्बाकू में स्वाद आता है | पहली बार किसी को तम्बाकू खिलाकर देख लो, वह चक्कर खाकर गिर पड़ेगा; इसे पूर्वाभ्यास कहते हैं | हमारा अनादिकाल से विषयों का अभ्यास है | जो विषय कड़वे हैं, जहर हैं लेकिन अभ्यास के कारण मीठे लग रहे हैं | किसी ने कभी शराब नहीं पिया हो और उसे शराबी के पास ले जाओ तो उसे दुर्गन्ध आयेगी और वह वहाँ से भाग जायेगा लेकिन बाद में वही व्यक्ति तम्बाकू या शराब में इतना स्वाद लेने लगता है कि भोजन भले ही न दो परन्तु तम्बाकू या शराब दे दो | हम लोग हुक्के की दुर्गन्ध सहन नहीं कर पायेंगे लेकिन हुक्के वाले को हुक्का दे दो; भले ही रोटी न दो | हम लोगों को बीड़ी की दुर्गन्ध अच्छी नहीं लगती है लेकिन बीड़ी वाले से पूछो, उसे इतना स्वाद आता है कि उसी दुर्गन्धयुक्त धुएँ को वह मुँह से अथवा नाक से बार-बार निकालता है और आनंद लेता है, ये सब अभ्यास है | संसार में देखा जाता है कि चाहे स्त्री हो या पुरुष हो, व्यक्ति जब विषय सीखता है तो उसको पहले-पहले सुख की अनुभूति नहीं होती है बल्कि दुःख की अनुभूति होती है लेकिन अभ्यास के कारण वह दुःखप्रद वस्तु सुख में बदल जाती है | इसी प्रकार जितनी भी दुनिया की गन्दी चीजें हैं, गंदे विषय हैं, गंदे नशे (तम्बाकू, भांग, अफीम, सुल्फा, बीड़ी सिगरेट) हैं, वे सब विष हैं लेकिन अभ्यास के कारण मीठे बन जाते हैं | मनुष्य गलत नशेबाजों के कुसंग में पड़कर अभ्यास में पड़ जाता है | विषयों का अभ्यास ही हमको विषयों में मधुरता की प्रतीति करा रहा है, जो भगवन्नाम की मधुरता में सबसे बड़ा बाधक है | **"आखर मधुर मनोहर दोऊ"** भगवन्नाम मीठा क्यों नहीं लगता है ? इसका उत्तर सदा याद रखना चाहिए जो कि रामायण में शिवजी कह रहे हैं –

मुकुर मलिन अरु नयन बिहीना ।
राम रूप देखहिं किमि दीना ॥

(श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड- ११५)

अगर 'मुकुर' भीतर का शीशा (अन्तःकरण) गंदा है तथा

नेत्र फूटे हुए हैं तो भगवान् का नाम, भगवान् का रूप कैसे देख सकते हैं ? श्रीमद्भागवतजी में भी ऋषभ भगवान् ने कहा है –

नायं देहो देहभाजां नृलोके,
कष्टान् कामानर्हते विड्भुजां ये |
तपो दिव्यं पुत्रका येन सत्त्वम्,
शुद्धयेद्यस्माद् ब्रह्मसौख्यं त्वनन्तम् ||

(श्रीमद्भागवतजी५/५/१)

हमारे मन में मीठा विष, मल-मूत्र भरा हुआ है, इसलिये **'ब्रह्मसौख्य'** भगवान् का प्रेम नहीं आता | ऋषभ जैसे पिता कोई नहीं हुये | ऋषभदेवजी अपने बेटों से कह रहे हैं कि देखो, ये शरीर कष्टमय भोगों **'विड्भुजाम्'** अर्थात् टट्टी खाना, इसलिये ये शरीर नहीं मिला है कि कष्टमय भोगों को भोगे, टट्टी खाए | अनादिकाल से हम यही कर रहे हैं, इसको छोड़कर दिव्य तप करो, भगवन्नाम, गुण, लीला गाओ, जिससे तुम्हारा अंतःकरण शुद्ध हो जायेगा, तब तुमको **'ब्रह्मसौख्य'** अर्थात् भगवान् के प्रेम-मधुरता का अनुभव हो जायेगा; ये अकाट्य शाश्वत सिद्धांत है | मिथ्या विषय-रस (मल-मूत्र का भोग करना) यही चीज हम जैसे विषयी लोगों की नहीं छूटती, इस मल-मूत्र को खाने के लिये मनुष्य छल, कपट, चोरी करता है और गुरु-गोविन्द, माँ-बाप सबको छोड़ देता है |

एकबार हमारे पास एक महात्मा आये थे, वे हिन्दुस्तान के बहुत बड़े नामी संत के शिष्य थे | ये सच्चे शिष्य थे तो जब उन बड़े महात्मा का शरीर पूरा होने लगा तो इन्होने दरवाजा बंद कर दिया, ताकि गुरुजी के पास कोई न आ पावे | लोगों ने बहुत झगड़ा किया लेकिन इन्होने कहा, "मर जायेंगे लेकिन दरवाजा नहीं खोलेंगे |" हमको उस शिष्य ने गुप्त रूप से बताया कि उसने ऐसा इसलिये किया क्योंकि अंतिम समय पर उन्होंने जो भोग भोगे थे उसकी स्मृति आ रही थी | वे स्त्री के गुप्तांगों का वर्णन कर रहे थे जो कितनी घृणित बात है, उसको ज्ञानी कैसे माना जायेगा ? तो ये चित्त वृत्ति कहाँ जाके टिकी - एक चर्मछिद्र पर ! इसका परिणाम क्या होगा ? मल-मूत्र के कीड़े बनेंगे | भगवान् ने इसका परिणाम श्रीमद्भागवत में बताया है -

त्वङ्मांसरुधिरस्नायुमेदोमज्जास्थिसंहतौ ।
विण्मूत्रपूये रमतां कृमीणां कियदन्तरम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी ११/२६/२१)

वे कीड़े जो मल-मूत्र में रहते हैं, उन कीड़ों में और भोग-भोगने वाले मनुष्यों में अंतर क्या है ? थोड़ी देर के लिए मनुष्य शरीर मिला है फिर मर के वही कीड़ा बन जायेगा | **'सत्वं शुद्धयेद्यास्माद्'** पहले तुम्हारा अंतःकरण शुद्ध होगा तब **'ब्रह्मसौख्य'** प्रेम-मधुरता का अनुभव होगा | उसके पहले मधुरता का अनुभव हो ही नहीं सकता | श्रीमद्भागवतजी में प्रह्लाद जी कहते हैं –

मतिर्न कृष्णे परतः स्वतो वा,
मिथोऽभिपद्येत गृहव्रतानाम् ।
अदान्तगोभिर्विशतां तमिस्रं,
पुनः पुनश्चर्वितचर्वणानाम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी ७/५/३०)

तुम्हारी इन्द्रियाँ अंधकार में जा रही हैं, तुमने उसका दमन नहीं किया, चबे हुये को, चाबे-थूके हुये को चाटते हो तो तुमको प्रकाश की प्रतीति कैसे हो जायेगी ? तुम हजार साधन करो, तुम्हारी बुद्धि में कृष्ण, कृष्ण का नाम भासित नहीं होगा क्योंकि तुम्हारी इन्द्रियाँ अंधकार में जा रही हैं | तुम्हारी बुद्धि कृष्ण में कभी नहीं लग सकती | इस श्लोक में प्रह्लादजी ने बताया है कि बुद्धि भगवान् में क्यों नहीं लगती ? फिर बताया बुद्धि भगवान् में कैसे लगे ? **नैषां मतिस्तावदुरुक्रमाङ्घ्रिं स्पृशत्यनर्थापगमो यदर्थः।**
महीयसां पादरजोऽभिषेकं निष्किञ्चनानां न वृणीत यावत् ॥

(श्रीमद्भागवतजी ७/५/३२)

निष्किंचन महापुरुष की शरण में चले जाओ तो अवश्य कल्याण हो जायेगा | लेकिन केवल उनके पास रहने से नहीं, बल्कि उनके चरण रज में स्नान करो अर्थात् सच्ची शरणागति हो जाये, केवल पास रहने से कुछ

नहीं होता, तार से तार जुड़ना चाहिए, मन से मन एक हो जाना चाहिए –

नारायण एही सदन में हरि आवे केहि बाट ।
विकट जटित जौ लौ खुलत कपट कपाट ॥

कपट है तो वहाँ शरणागति कभी नही हो सकती | निष्कपट शरणागति नही है तो वो गुण तुम्हारे में नहीं आएगा | इसका एक सूत्र पतंजलि भगवान् ने लिखा है – **"वीतराग विषयं वा चित्तम्"** कोई साधन मत करो, किसी वीतराग पुरुष में चित्त लगा दो तो सब गुण तुम्हारे अन्दर आ जायेंगे अर्थात् निष्कपट शरणागति हो | कपट रहेगा तो कुछ नहीं होगा | जहाँ तुम्हारी शरणागति है चाहे विषय में है, कपट में है, वही वृत्तियाँ तुम्हारे अन्दर आ जाएगी | ये सिद्धांत है | श्रीमद्भागवत में भी वर्णन है –

सङ्गो यः संसृतेर्हेतुरसत्सु विहितोऽधिया ।
स एव साधुषु कृतो निःसङ्गत्वाय कल्पते ॥

(श्रीमद्भागवतजी- ३/२३/५५)

ममैते मनसा यद्यदसावहमिति ब्रुवन् ।
गृह्णीयात्तत्पुमान् राद्धं कर्म येन पुनर्भवः ॥

(श्रीमद्भागवतजी- ४/२९/६२)

तुम जिसको अपना मान लेते हो उसके सभी कर्म तुम्हारे ऊपर आ जाते हैं | मनुष्य जिससे प्रेम करता है उसको अपना मानता है, फिर उसके सभी कर्म अपने-आप आ जाते हैं, पाप है तो पाप आ जायेगा, पुण्य है तो पुण्य आ जायेगा | प्रेमास्पद के गुण हो या अवगुण, सब प्रेमी में आ जाते हैं | **'जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई'** अगर आसक्ति असत् में है तो संसृति की हेतु बन गई और अगर वही आसक्ति संत में हो गई तो मोक्ष द्वार खुल गया | इसलिये इस मधुरता का हमें आभास नहीं हो रहा है क्योंकि हमारे अन्दर विषयों व आसक्तियों का घोर तम (अन्धकार) है, जो कीचड़ (दलदल) की तरह है –

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति ।
तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च ॥

(श्रीमद्भगवद्गीता- २/५२)

भगवान् ने कहा है- हे अर्जुन ! जब तक मोह के कीचड़ को बुद्धि पार नहीं कर लेती है, तब तक निर्वेद हो ही नहीं सकता | मोह का कीचड़ जो हमारे मन-बुद्धि में घुसा हुआ है, मल-मूत्र की जो तृष्णायें हैं, ये जब तक हैं तब तक अंधकार है | जब मनुष्य असंगता से उसको काट देता है तब उसको अनुभव होता है | भगवान् ने कहा है –

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते,
नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा ।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल-
मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा ॥

(श्रीमद्भगवद्गीता- १५/३)

असंगता की तलवार ले लो | **'ज्ञानासिना'** ज्ञान रूपी तलवार या असंगता की तलवार लेकर आसक्ति के टुकड़े-टुकड़े कर दो –

तस्मादज्ञानसम्भूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनात्मनः ।
छित्त्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ॥

(श्रीमद्भगवद्गीता- ४/४२)

मूल कारण यही है कि क्यों मधुरता का अनुभव नहीं हो रहा है ? विषयांधकार के रहते चाहे तुम कितना भी पढ़ लो, लिख लो, वेष बना लो, कुछ नहीं होने वाला |

श्लोक – ३०

देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत । तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि ॥

यह जीव नित्य है, अवध्य है सभी के शरीरों में, इसलिए सम्पूर्ण प्राणियों के लिए तुम शोक मत करो | देही अर्थात् शरीर वाला आत्मा नित्य है, अवध्य है अर्थात् इसको मारा नहीं जा सकता | सभी प्राणियों की देह के भीतर आत्मा है, भगवान् कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि इस कारण से किसी भी प्राणी के लिए तुम शोक मत करो क्योंकि सबके भीतर देही (आत्मा) है, उसकी कभी मृत्यु नहीं होती है | इसलिए कभी शोक नहीं करना चाहिए |

अनन्त कृपामय 'अवतरित धाम'

श्रीबाबा महाराज के पदगान (६/१२/२०१९, २२/११/२०१९) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- दीदीजी गुरुकुल की छात्रा बालसाध्वी अर्चनाजी, मानमन्दिर, बरसाना

द्रविड़ देश में उत्पन्न 'भक्ति महारानी' कर्नाटक, महाराष्ट्र होते हुए गुजरात आने पर बूढ़ी हो गईं किन्तु श्रीवृन्दावनधाम में आने पर फिर से नवीन युवती बन गईं | नारदजी ने कहा –

वृन्दावनस्य संयोगात्पुनस्त्वं तरुणी नवा ।
धन्यं वृन्दावनं तेन भक्तिर्नृत्यति यत्र च ॥

(श्रीमद्भागवत, माहात्म्य- १/६१)

स्वयं भक्ति देवी ने कहा –

वृन्दावनं पुनः प्राप्य नवीनेव सुरूपिणी ।
जाताहं उवती सम्यक्प्रेष्ठरूपा तु साम्प्रतम् ॥

(श्रीमद्भागवत, माहात्म्य- १/५०)

यह वही धाम है, जहाँ साक्षात् भक्ति भी युवती हो जाती है, इस पर सभी को विश्वास करना चाहिए, इसी विश्वास के साथ यहाँ निवास करना चाहिए | विश्वास करने वाला व्यक्ति ही सब कुछ पाता है, इसीलिए आचार्यों को कहना पड़ा – **"यही है यही है भूलि भरमो न कोउ"** | युग का प्रभाव है जो ब्रज में गंदे नदी-नाले दिखाई पड़ते हैं तथा यहाँ के मनुष्य प्रपञ्ची दिखाई पड़ते हैं | ब्रजवासियों में वह बात नहीं दिखाई पड़ती जैसा कि शास्त्रों में उनके बारे में कहा गया है लेकिन हम सबको इसी विश्वास के साथ यहाँ निवास करना चाहिए, इसी विश्वास पर जीना चाहिए, इसी विश्वास से उपासना करना चाहिए; यह बात हमारे यहाँ के महापुरुषों ने पहले ही कह दी है –

"यही है यही है भूलि भरमो न कोउ, भूलि भरमे तें भव भटक मरिहौ ||" (श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी कृत महावाणी – २९५)

यदि विश्वास नहीं करोगे तो भवसागर में भटकते रहोगे – **"लाड़िली-लाल के नित्य सुखसार बिन,"** इसी धरा-धाम में श्रीराधामाधव की जो लीलाएँ हुई हैं, वे नित्य लीलाओं का भी सार हैं; ऐसा विश्वास नहीं करोगे तो – **"कौन विधि वारतें पार परिहौं |"** एक अनन्य विश्वास धारण करो यदि तुमको कुछ पाना है तो |

"एक अनन्य की टेक उर में धरौ,
परिहरौ भर्म ज्यौं फूलि फरिहौ |"

अनन्य विश्वास रखो, किसी भी भ्रम (संशय) को छोड़ दो; इसी विश्वास से बड़े-बड़े रसिकों ने बताया है, देखा है, अनुभव किया है, ये वही रास्ता है, यही विश्वास तुम्हें नित्यधाम में पहुँचा देगा – **"श्रीहरिप्रिया के परमपद पास ही, आसु अनिवास ही वास करिहौ |"**

इसीलिए – **"यही है यही है भूलि भरमो न कोउ"** बड़े-बड़े महापुरुषों ने इसी धाम की याचना की है –

"अहो विधना तोपै अँचरा पसारि माँगौं,
जनम-जनम दीजो मोहि याही ब्रज बसिबौ |"

अष्टछाप के छीतस्वामीजी, जो मथुरा के ब्रजवासी थे, उन्होंने इसी ब्रज में जन्म-जन्मान्तर में वास माँगा है, यही ब्रज जो हम लोगों को दिखाई पड़ता है, स्थूल आँखों से जो यहाँ पार्थिव मिट्टी दिखाई पड़ती है | लगभग ६५ साल पहले जब हम ब्रज में आये थे तो नंदगाँव गये थे | उस समय सारा ब्रज 'भावना' से ऐसा लगता था कि दिव्य है | जब हम नन्दभवन में दर्शन करने गये तो यही पद याद गाया – **"अहीर की जाति समीप नन्द घर |"** 'नन्दघर' माने नन्दभवन के पास में हमें एक घर मिलेगा, जाति तो अहीरों की होगी – **"घरी-घरी स्याम हेरि-हेरि हँसिवौ |"** इसी भाव से नन्दगाँव में जाना चाहिए और दर्शन करना चाहिए, इसी विश्वास के साथ आँख खोलो तब तुम्हें दिव्य दर्शन मिलेगा | उसके बाद जब बरसाना आओ तो साँकरी खोर में जाते समय यही भावना करो –

"दधि के दानन मिस ब्रज की बीथिन माँहि,
झक झोरनि अंग-अंग को परसिवौ ||"

वहाँ भावना करो कि श्रीकृष्ण दान ले रहे हैं अपने सखाओं के साथ और ब्रज की गलियों में गोपियों को झकझोर रहे हैं तथा उनके सभी अंगों को स्पर्श करते हैं दही-दान के लिए | जब भाव पक जायेगा तो तुमको इसी भूमि में महारास मिलेगा –

"छीतस्वामी गिरिधरन श्री विट्ठल, सरद रैनि
रस-रास कौ बिलसिवौ ||"

अष्टछाप के ही कवियों में गोविन्दस्वामीजी बहुत नामी हुए हैं, उन्होंने वह लीला गाई जो ब्रजवासियों को वैकुण्ठ में दिखाई पड़ी | श्यामसुन्दर ने ब्रजवासियों को उनके कहने पर वैकुण्ठ दिखाया, तब उन्होंने गाया –

"कहा करों वैकुण्ठहि जाय |" अरे ! हम वैकुण्ठ में जाकर क्या करेंगे ? क्योंकि – **"जहाँ नहीं वंशीवट यमुना, गिरिगोवर्धन नन्द की गाय |"** जिस वैकुण्ठ में ब्रज की सी लतायें नहीं है – **"जहाँ नहीं यह कुंज लता द्रुम, मंद सुगंध बहत नहीं वाय |"** जिस वैकुण्ठ में इन लताओं की 'वाय' अर्थात् हवायें नहीं हैं, सुगंध नहीं है, उस वैकुण्ठ में हम क्यों जायें – **"कोकिल हंस मोर नहिं कूजत, ताको बसिबो काहि सुहाय |"** ब्रज-प्रेमी को वैकुण्ठ अच्छा नहीं लगेगा, इसलिए – **"कहा करों वैकुण्ठहि जाय |"** ये वृन्दावन धाम वही है, जहाँ नित्य वंशी बजती है | हम लोगों को सुनायी नहीं पड़ रही है लेकिन ६००-७०० साल पहले जब चैतन्य महाप्रभु ब्रज में आये तो उनको वही ब्रज दिखाई पड़ा | उन्होंनें देखा रास्ते में पागल हाथियों को, जो 'कृष्ण' नाम का उच्चारण करने पर मस्त हो गये, चैतन्य चरितामृत में यह लिखा है, पशु-पक्षी महाप्रभु को दिखायी पड़े कृष्ण-प्रेम से युक्त, 'श्रीकृष्ण नाम' लेते हुए उन्हें दिखाई व सुनाई पड़े | इसलिए कहा गया है –

"कोकिल हंस मोर नहिं कूजत, ताको बसिबो काहि सुहाय ||" गोविन्द स्वामीजी को जैसा ब्रज दिखाई पड़ा, उसे उन्होंने इस पद में गाया है – **"जहाँ नहीं वंशी धुनि बाजत |"** उस समय (ब्रज में) वंशी बजती थी | चैतन्य महाप्रभु ने भी कहा – **"मधुर-मधुर वंशी बाजे, शेई तो वृन्दावन |"** अथवा **"कहा करैं वैकुण्ठ हिं जाय | जहाँ नहीं वंशी धुन बाजत, कृष्ण न पुरवत अधर लगाय |"** ओठों पर लगाकर जहाँ श्यामसुंदर वंशी नहीं बजाते हैं, ऐसे वैकुण्ठ में जाकर हम क्या करेंगे ? आज भी श्यामसुन्दर ब्रज में वंशी बजाते हैं, उनकी कृपा से वंशी धुन सुनाई पड़ती है | आज भी श्रीकृष्ण की वंशी धुन को सुनकर गोपियों के शरीर में प्रेम से पुलक यानि रोमांच होता है और तन-मन-वचन से वे दौड़ती हुई दिखाई पड़ती हैं – **"प्रेम पुलक रोमांच न उपजत, मन वच क्रम आवत नहीं धाय |"** ऐसे ब्रजवासी हैं, ऐसी गोपियाँ हैं, जिनका मन सदा उसी (श्रीकृष्ण) लीला में रहता है, जिनकी वाणी से वही बातें निकलती हैं, जिनके कर्म भी उसी कृष्ण की याद कराते हैं | **"जहाँ नहीं यह भुवि वृन्दावन |"** इसी भुवि (मिट्टी) में वह धाम है, इसी मिट्टी में नन्दबाबा, यशोदा मैया आदि दिखाई पड़ेंगे | हम लोग यहाँ विश्वास के साथ नहीं रहते हैं, विश्वास की कमी है | **"जहाँ नहीं यह भुवि वृन्दावन, बाबा नन्द यशोमति माय |"** गोविन्द स्वामी कहते हैं कि उस वैकुण्ठ में क्या है ? न नन्दबाबा हैं, न यशोदा मैया हैं –

"गोविन्द प्रभु तजि नन्द सुवन को,
ब्रज तजि वहाँ मेरी बसै बलाय |"

ब्रजमण्डल का स्वरूप-दर्शन यहीं इसी धाम में होगा, हमको दिखाई नहीं पड़ रहा है |

"प्रगट जगत में जगमगे, वृन्दा विपिन अनूप |
नैन अछत दीखै नहीं, यह माया को रूप |"

<u>(श्रीबाबामहाराज के पदगान २२ नवम्बर, २०१९से संकलित) -</u>

"कर दे दया दयालु, हम तो पड़े हैं दर पे |
भवसिन्धु में हैं डूबे, पापों का भार सिर पे ||

(ब्रजभावमालिका)

ये बड़ा ही सुन्दर पद 'भगवान्' से मिलाने वाला है | पाप क्या है? 'अहं' ही सबसे बड़ा पाप है, जो हर क्रिया में हमलोग करते हैं; ये हमने किया, ये उसने किया, ये सब पाप है | सब क्रियाएँ भगवान् की ओर से हो रही हैं और उसकी जगह जीव ये समझता है कि जो कुछ कर रहे हैं, हम कर रहे हैं | खाना-पीना, रहना-सहना, घूमना-फिरना- इन सबमें जीव समझता है कि हम कर रहे हैं, इसको भूलकर ये सोचना चाहिए कि जो कुछ कर रहा है, प्रभु कर रहा है और जो कुछ हो रहा है कृष्णकृपा से हो रहा है – **"चंदा में तू चमकता, सूरज में रोशनी तू ही | तारों में झिलमिलाता, वर्षा के हर कणों में ||"**

तारे झिलमिलाते हैं तो हमलोग समझते हैं कि रात हुई है और तारे चमक रहे हैं, ये तारों की चमक है | कोई भी ये नहीं समझता कि ये तारे प्रभु की कृपा से चमक रहे हैं | सूर्य में जो रोशनी है, वह हम समझते हैं कि सूर्य में है, सूर्य में वह रोशनी भी भगवान् की है | तारे चमकते हैं तो हमलोग समझते हैं कि यह तारों की चमक है लेकिन यह तारों की चमक नहीं है, ये सब प्रभु की लीला है | पानी की बूँदें गिरती हैं तो हम जैसे लोग समझते हैं कि वर्षा होना प्रकृति का स्वभाव है, प्रकृति का स्वभाव नहीं है | संसार में बारिश न हो तो सारा संसार मर जायेगा | प्रभु ही वर्षा के कणों में बसते हैं और हम जो साँस लेते हैं –

"हर साँस का तू ही आधार प्राण बनकर,
सबका तू ही है जीवन प्राणों का प्राण बनकर |"

सारे संसार का जीवन है प्रभु | कभी भी हमलोग नहीं सोचते हैं कि जो हम जी रहे हैं, हम जो साँस ले रहे हैं, ये प्रभु की दया है, यह प्रभु ही है | साँस लेते हैं, उसका जो आधार है प्राणवायु, वह प्रभु ही है –

"जग का बनाने वाला और पालन करने वाला,
जगदाधार आत्मा जगरूप तू ही बनके |" ये भावनाएँ जब पक्की हो जाती हैं कि सब कुछ श्रीकृष्ण ही है तो भगवान् से मिलने में देर नहीं होती है | जो कुछ संसार में है, सब प्रभु ही है; ये जब विश्वास हो जाता है तो भगवान् ही सब जगह दिखाई देता है | प्रह्लादजी को मारने के अनेक उपाय किये हिरण्यकशिपु ने लेकिन वह नहीं मरे क्योंकि वह सबमें कृष्ण देखते थे, यही सबसे बड़ी भक्ति है, यही ज्ञान का सार है – **"सर्वं खल्विदं ब्रह्म |"** ये सब संसार ब्रह्मरूप है | वायु बह रही है, "वाति इति वायु |" उसका नाम वायु क्यों पड़ा ? 'व' धातु से बहना अर्थ होता है, जो सदा बहती रहती है, वह वायु है और हर मनुष्य जी रहा है, इसका कारण क्या है?

"जग का बनाने वाला और पालन करने वाला,
जगदाधार आत्मा जगरूप तू ही बनके |
हर साँस का तू ही आधार प्राण बनकर,
सबका तू ही है जीवन प्राणों का प्राण बनकर |"

ब्रज-निष्ठा का सुप्रसिद्ध पद है –

यही है यही है भूलि भरमो न कोउ,
भूलि भरमें तें भव भटक मरिहौ |

हमलोग संसार में क्यों भटक रहे हैं ? दुःख पा रहे हैं और अनेक यातनाएँ, कष्ट पा रहे हैं क्योंकि श्रीभगवान् को भूल गये हैं, सब कुछ प्रभु हैं, ये किसी को याद नहीं है | जब दुःख पड़ता है तो जीव रोता-चिल्लता है, सुख मिलता है तो खुश होता है, हँसता है | इसलिए भगवान् ने गीता में कहा है –

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति ।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १२/१७)

जो न प्रसन्न होता है, न रोता है, न दुःखी होता है, सांसारिक द्वंदों को छोड़ देता है; इसी को भक्तलोग याद दिलाते हैं कि सब कुछ भगवान् हैं –

"सर्वं खल्विदं ब्रह्म |"

यही है यही है भूलि भरमो न कोउ,
भूलि भरमें तें भव भटक मरिहौ |

भवसागर में हम लोग भटक रहे हैं, कष्ट पा रहे हैं, दुःख पा रहे हैं परन्तु भगवान् ही सब कुछ हैं, यह कभी याद नहीं आता –

लाड़लीलाल के नित्य सुखसार बिन,
कौंन बिधि वारतें पार परिहौ |

इस संसार में धन-सम्पत्ति में, मिट्टी में, मिथ्या चीजों में हमलोग सुख समझते हैं, इनकी प्राप्ति सुख देती है, ये भ्रम है हमारा, मिट्टी की प्राप्ति में सुख मानते हैं | **"भूलि भरमे ते भव भटक मरिहौं |"** इसीलिए उस स्मृति को यहीं पाते हैं - सब कुछ भगवान् है | जन्म भी भगवान् है, मृत्यु भी भगवान् है; अगर यह धारणा पक्की बन जाए तो कभी भी दुःख नहीं आयेगा, कभी भी कष्ट नहीं होगा, न उसकी अनुभूति होगी –

लाड़लीलाल के नित्य सुखसार बिन,
कौंन बिधि वारतें पार परिहौ |

कैसे भवसागर से पार जाओगे, नहीं जा सकते, चाहे तुम

जितना भी साधन करो, चाहे जितना कुछ कर्म करो | उन रसमय भगवान् को पाना है तो ये सोचना पड़ेगा कि सब कुछ प्रभु है | **"एक अनन्य की टेक उर में धरो |"** अनन्य बन जाओ - सब प्रभु है | अभी हम अनन्यता की बातें कर रहे हैं किन्तु अनन्य नहीं हैं | **"परिहरौ भर्म ज्यौं फूलि फरिहौ ।"** चित्त में अनेकताएँ, अनेक रूप, अनेक चीजें घुसी हुई हैं, इसको हम छोड़ नहीं पाते हैं फिर कैसे फूलेंगे, कैसे फलेंगे ? इसीलिए भगवान् की अखंड स्मृति जब तक नहीं आएगी, तब तक भगवान् नहीं मिल सकते | प्रह्लादजी को भगवान् मिले क्योंकि उन्होंने सब कुछ भगवान् को मान लिया था और ये हम लोग गाते हैं किन्तु ऊपरी मन से गाते हैं | ब्रजोपासना में ब्रज सब कुछ है, भगवान् है –

अहो विधना तोपै अचरा पसार माँगों |
जनम-जनम दीजो मोहि याहि ब्रज बसिबो ||

ब्रज में लोग आते हैं लेकिन ब्रज की उपासना क्या है, इसे नहीं करते हैं, इसे जानते भी नहीं हैं | ब्रजभूमि कृष्णमय है, यहाँ की मिट्टी ब्रज है, यहाँ का पानी ब्रज है, यहाँ के रहने वाले ब्रज हैं, यहाँ के जितने भी जीव हैं, सभी ब्रज हैं –

लाड़लीलाल के नित्य सुखसार बिन,
कौंन बिधि वारतें पार परिहौ |

इस ब्रज में लाड़लीलाल (राधा-माधव) का विलास सुख, एक-एक यहाँ का कण उसी सुख से भीजा हुआ है, उसके बिना कुछ नहीं है; जब तक ये भाव नहीं आयेंगे, ये धारणा हृदय में नहीं बैठेगी तब तक हम भवसागर पार नहीं हो सकते | **"एक अनन्य की टेक उर में धरो |"** सब कृष्णमय है, पूरा ब्रज कृष्णमय है | 'उर' अर्थात् हृदय में बैठा लो कि यहाँ का कण-कण कृष्णमय है | ये जो भेद दिखाई पड़ता है – यह स्त्री है, यह पुरुष है, ये अच्छा है, ये बुरा है; ये सब मिट जाना चाहिए | यहाँ का एक-एक कण हमको ऐसा दिखाई पड़े, जैसे –

सद्योगीन्द्र सुदृश्य सान्द्र रसदानन्दैक सन्मूर्त्तयः
सर्वेप्यद्भुत सन्महिम्नि मधुरे वृन्दावने संगताः।
ये क्रू रा अपि पापिनो न च सतां सम्भाष्य दृश्याश्चये
सर्वान्न्वस्तुतया निरीक्ष्य परम स्वाराध्य बुद्धिर्मम ॥

(श्रीराधासुधानिधि - २६४)

एक-एक कण आनंद-रस की मूर्ति है, अगर ऐसा मन नहीं बना और भेद दिखाई पड़ता है तो ब्रज की उपासना सिद्ध नहीं हुई | चाहे क्रूर है, पापी है लेकिन ब्रज में आये हैं तो उनको भी देखकर आराध्य-बुद्धि रखो (साक्षात् भगवान् मानो), ऐसे-ऐसे क्रूर हैं कि चोरी करते हैं, हत्या कर देते हैं, व्यभिचारी हैं, महापापी हैं, पापमय जिनके कर्म दिखाई पड़ते हैं, न वे देखने लायक हैं, न बोलने लायक हैं; फिर भी उन्हें चोर, पापी, विषयी (भोगी) मत समझो, उन सबको परम स्वाराध्य रूप में देखो कि ये हमारे साक्षात् प्रभु (इष्ट) हैं, ऐसा भाव ही मन में रहे, इसे 'ब्रजोपासना' कहते हैं | **"अहो विधना तोपै अचरा पसार माँगों |"** ब्रज में यही माँगना चाहिए – **"जनम-जनम दीजो मोहि याहि ब्रज बसिबो ||"** ये मिट्टी वही मिट्टी है, ये पानी वही पानी है, जहाँ श्रीकृष्ण खेलते थे | **"जनम-जनम दीजो मोहि याहि ब्रज बसिबो |"** 'याही' शब्द को समझो - सब कुछ ब्रज है लेकिन हमारी भावनाएँ शुद्ध नहीं हैं, इसलिए वह दिखाई नहीं पड़ रहा है | **"अहो विधना तोपै अचरा पसार माँगों |"** जब भगवान् ऐसी भक्ति देंगे, ऐसा भाव तभी आयेगा, उस समय सब भेद, सुख-दुःख मिट जायेंगे, जो कुछ ये दिखाई पड़ता है, सब राधाकृष्णमय दिखाई पड़ेगा –

"लाड़लीलाल के नित्य सुखसार बिन,
कौंन बिधि वारतें पार परिहौ |"

और कोई रास्ता नहीं है भगवान् से मिलने का | यही रास्ता ध्रुव ने, प्रह्लाद ने, सभी रसिकों ने प्राप्त किया | ब्रज का एक-एक कण सब दिव्य-चिन्मय है | **हे गोविन्द !** "हम ये नहीं चाहते कि ब्रज में हमें ऊँचा बनाओ, ब्राह्मण बनाओ, कथावाचक बनाओ या करोड़पति बनाओ |" **"एक अनन्य की टेक उर में धरो |"** एक भाव को टेक कहते हैं, अनन्य बनना, 'अनन्य' माने एक निष्ठा रखना; बस, दूसरी बात याद न आये, वह है 'अनन्य' | हम लोगों को पचासों बातें याद आती हैं – ये अच्छा है, ये बुरा है, ये शत्रु है, ये मित्र है; यही बात भगवान् ने गीता में कही है

कि शत्रु-मित्र आदि सब भेद मिटा दो, सब कुछ भगवान् ही है | जो भेद दिखाई पड़ता है, उसको छोड़ दो | **"परिहरौ भर्म ज्यौं फूलि फरिहौ ।"** फूलोगे- फलोगे, फूलना-फलना अर्थात् आनंद प्राप्त करोगे और जैसे एक पेड़ है फूलों का, फलों का उसका एक ही रूप रहता है; आम का पेड़ है तो उसमें आम ही लगेगा, इसी तरह से जब ऐसा मन बन जायेगा, ऐसी सुदृढ़ भावना बन जाएगी तब हमको यह स्थिति मिलेगी – **"अहो विधना तोपै अचरा पसार माँगों |"** अविचल भक्ति, अखंड प्रेम, रसरूपा भक्ति – जब श्रीजी देंगी तब मिलेगी | हम लोगों की सामर्थ्य की यह बात नहीं है | इसीलिए – **"अँचरा पसारि माँगों, जनम-जनम दीजौ मोहि याहि ब्रज बसिबो ||"** इस ब्रज में हम ये नहीं चाहते कि हमको ब्राह्मण बनाओ, विद्वान बनाओ, धनी बनाओ | हमें तो छोटे से छोटा बना दो –

"अहीर की जाति समीप नन्दघर, घड़ी-घड़ी श्याम मुख हेरि-हेरि हँसिबो |"

यहीं नन्दगाँव-बरसाने में हमारा निवास रहे और जब यहीं रहेंगे तो यहीं श्यामसुन्दर के दर्शन मिलेंगे |

भगवान् को अर्पित वस्तु ही अमूल्य

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'गोपी-गीत' (२७/८/१९९४) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- दीदीजी गुरुकुल की छात्रा बालसाध्वी वनदेवीजी, मानमन्दिर, बरसाना

गीत की रचना पहले परावाणी में होती है अर्थात् पहले भाव आते हैं, वे भाव जब सुन्दर होते हैं तो भगवान् को अच्छे लगते हैं और उसको सुस्वरता कहा जाता है | यदि भाव में सुन्दरता नहीं है तो कलापक्ष कितना भी सुन्दर है उसका कोई भी मूल्य नहीं है | एक उदाहरण है - जैसे तानसेन जी थे, वह इस युग के बहुत बड़े गायक हुए, उनकी तान के बारे में कहा जाता है कि यह अच्छा हुआ कि ब्रह्मा ने शेषनाग को कान नहीं दिए, नहीं तो तानसेन की तान सुनने से उनका मस्तक हिलता और पृथ्वी डोलती | वैसे तो यह अतिश्योक्ति है फिर भी तानसेन बहुत बड़े गायक हुए हैं और वे प्रायः ब्रजभूमि में आते रहते थे, वे श्री विट्ठलनाथ जी के कृपापात्रों में भी थे | उस समय ब्रज में कई कुशल संगीतज्ञ महात्मा भी रहते थे | एक बार तानसेन ब्रज में पधारे तो उन्होंने सुना कि गोस्वामी विट्ठलनाथजी के शिष्य गोविन्द स्वामीजी बहुत अच्छे गायक हैं | वास्तव में गोविन्द स्वामीजी जी अत्यधिक कुशल गायक थे | इनके संगीत को ठाकुर जी-श्री जी सुनते थे और यहाँ तक कहा जाता है कि श्यामसुंदर भी इनके साथ बैठकर के गाया करते थे क्योंकि वे इनके सखा थे | गोकुल में एक टीला है, वहाँ बैठकर के दोनों मित्र गोविन्द स्वामी और श्री गोकुलनाथ जी तान भरते थे | एक बार तानसेन ने गोकुल में आकर ठाकुरजी जी का दर्शन किया और गुसाईं जी को प्रणाम किया | गुसाईं जी ने तानसेन के मन की बात जानकर उनसे कहा – "तानसेन जी ! तुम ठाकुरजी जी के लिए कोई गीत सुनाओ |" गुसाईं जी की आज्ञा से विश्व के इन प्रसिद्ध गायक ने तानपुरा उठाया और गाने लग गए | यह बहुत ही उत्कृष्ट गान था | गान के बाद में गुसाईं जी की ओर से तानसेन को गोकुलनाथ जी की प्रसादी दी गयी | उन्हें एक थाल भेंट किया गया जिसमें सोने की मुद्राएँ और ठाकुर जी का प्रसादी पटुका था किन्तु एक विचित्र बात यह थी कि सोने की मुद्राओं के ऊपर एक कानी कौड़ी रखी हुई थी | सेवाधिकारीजी ने तानसेन से कहा कि ये आपके लिए ठाकुरजी का प्रसाद है तो उन्होंने झोली पसारकर गोकुलनाथ जी का प्रसाद, पटुका और सोने की मुद्राओं का थाल ग्रहण किया | उस थाल के ऊपर एक कानी कौड़ी रखी हुई थी तो तानसेन ने विचार किया कि इसमें कोई न कोई रहस्य है क्योंकि यह कानी कौड़ी जानबूझकर ही तो सोने से भरी मुद्राओं के ऊपर रखी

गयी है और फिर यह मन्दिर के भीतर से आई है, वहाँ भला कानी कौड़ी का क्या काम ? दूसरी बात यह भी है कि यदि यह कहीं से थाल पर गिरी होती तो इधर-उधर गिरती किन्तु यह तो थाल के मध्य में ही सजाकर रखी हुई है | तानसेन बड़े ध्यान से उस कानी कौड़ी को देखते रहे | उन दिनों भारत में बड़ी सभ्यता थी | सभी लोग आचार्यजी को, गोस्वामीजी को कृष्णरूप मानते थे | वस्तुतः सभी आचार्य भगवत्स्वरूप ही हैं, इसमें कोई संदेह नहीं समझना चाहिए | गोस्वामी विट्ठलनाथजी ने तानसेन से कहा – "तानसेन जी, आप क्या विचार कर रहे हैं, क्या आप कुछ पूछना चाहते हैं ?" तानसेन बोले – "जय-जय ! यह तो आपकी मेरे ऊपर कृपा है जो आपने मुझे ठाकुरजी का प्रसाद, पटुका और स्वर्ण मुद्राओं से भरा थाल प्रदान किया किन्तु इनके बीच में जो कानी कौड़ी रखी हुई है, इसका रहस्य मैं नहीं समझ पा रहा हूँ कि यह किसलिए भेंट में दी गयी है ?" गोस्वामी जी हँसने लगे और बोले – "देखो तानसेन जी ! गवैया अथवा कला की दृष्टि से तो तुम्हारी कोई कीमत ही नहीं है और इस उद्देश्य से तुम्हे सोने के थाल में जो स्वर्ण मुद्राएँ भेंट में दी गयीं, वे भी कम हैं | अतः कला की दृष्टि से तो तुम्हे यह भेंट दी गयी लेकिन भाव पक्ष की दृष्टि से कानी कौड़ी दी गयी है क्योंकि इतनी बड़ी गान कला को तुम एक भोगी राजा अकबर को सुनाते हो | इसलिए जो वस्तु संसार के लिए प्रयोग की जाती है, उसकी कीमत कानी कौड़ी ही है और जो वस्तु प्रभु के काम आती है, वही अनंत है, वही अमूल्य है |" कितनी अच्छी शिक्षा दी गोस्वामीजी ने | मनुष्य पांच पैसा भी यदि खर्च करता है तो वहाँ करता है जहाँ दुनिया के लोग जान सकें | दस रुपये भी मनुष्य भेंट करता है तो दिखाते हुए करता है कि दुनिया देखे | आदमी पत्थर पर अपना नाम अंकित करवाता है कि ये कमरा मैंने बनवाया है, मंदिरों में फूल बंगले बनाये जाते हैं तो उन पर भी बनवाने वाले का नाम लिखा जाता है | उदाहरण के लिए - किसी सेठजी द्वारा फूल बंगला बनाये जाने पर लिखा जाता है कि दो लाख रुपये में यह फूल बंगला सेठ कौड़ीमल की ओर से बनवाया गया है | इससे पता चलता है कि वस्तुतः यह वस्तु श्रीकृष्ण के लिए नहीं है | जो वस्तु केवल श्रीकृष्ण के लिए है, उसमें किसी को दिखाने का भाव नहीं होना चाहिए, कोई न जाने, केवल प्रभु ही जाने, यही वास्तविक सेवा है | जहाँ प्रदर्शन (दिखावा) है, ढोंग है, जीवाश्रय है तथा मैं (अहंता) को लेकर जो चीज की जा रही है कि मैं कर रहा हूँ, वह सेवा भगवान् स्वीकार नहीं करते हैं क्योंकि वह भगवान् के लिए है ही नहीं, ऐसी स्थिति में भगवान् उसे स्वीकार क्यों करेंगे ? प्रभु अन्याय नहीं करते हैं | हमलोग तो वेश्या वाला धंधा करते हैं जैसे वेश्या बहुत अच्छा नाचती-गाती है किन्तु उसकी इस कला का प्रदर्शन केवल दुनिया के लोगों (भडुओं) को रिझाने के लिए होता है उसी प्रकार हम लोग सारा कार्य अपनी अहंता की तुष्टि, मान-बड़ाई के लिए करते हैं, इसलिए इस प्रकार की सेवा भगवान् के लिए नहीं होती है | हमलोग दुनिया की प्रशंसा (वाह-वाह) चाहते हैं, हम अपना यश (नाम) चाहते हैं, इन सबकी कीमत केवल १ कौड़ी है, अधिक नहीं है चाहे वह सेवा अरबों रुपयों द्वारा ही क्यों न की गयी हो लेकिन वह प्रभु के लिए नहीं, अपने नाम के लिए है, अहंता (मान-बड़ाई) के लिए है अतः उसकी कीमत केवल १ कौड़ी है | वास्तव में उसकी कीमत १ कौड़ी भी नहीं बल्कि फूटी कौड़ी है | प्राचीन काल में अच्छी कौड़ी के द्वारा वस्तुओं को खरीदा जाता था, व्यापार किया जाता था, अब तो वह बात गप्प हो चुकी है | उस जमाने में अच्छी कौड़ी को लेकर बाजार में जाने पर नमक, मिर्च आदि सामान मिल जाता था लेकिन फूटी कौड़ी के बदले में कुछ नहीं मिलता था | हमलोग तो संसार में जितना भी कार्य करते हैं केवल फूटी कौड़ी का ही करते हैं | फूटी कौड़ी के द्वारा केवल नीचे का कार्य करते हैं अर्थात् केवल अपने मान-सम्मान के लिए कार्य करते हैं, कार्य के पीछे केवल बड़प्पन अथवा प्रदर्शन की भावना रहती है, लोग हमें जानें केवल यह

भावना रहती है | सांई (प्रभु) के दरबार में ऐसी भावना की कोई कीमत नहीं है | हाँ, संसार में तो ऐसा चलता है जैसे कि कहा गया है- **"भूत विद्या मल्लई, १२ साल चल्लई |"** भूतविद्या और पहलवानी की गाड़ी संसार में थोड़े दिन तक तो चल जाती है किन्तु अंत में इसका परिणाम अच्छा नहीं होता | संसार में ऐसा देखा जाता है कि बड़े-बड़े धर्माचार्य भी वैभवपूर्ण प्लॉट बनाते हैं, बेचते हैं, उनके लिए पैसा ही सब कुछ है, पैसा ही भगवान् है | इसका परिणाम यह होता है कि उनकी वृत्तियाँ माया में फंस जाती हैं | वृत्तियों का लक्ष्य क्या रहा ? शुद्ध माया | सेवा का यह फल नहीं होता है | जो सच्चे मन से सेवा करता है, प्रभु अपने-आपको उसे बेच देते हैं, उसे अपना सर्वस्व अर्पित कर देते हैं लेकिन सच्ची सेवा होनी चाहिए | वास्तव में सेवा नहीं हो पाती है- **"जैसी तेरी कौमरी, तैसे तेरे गीत"** अर्थात् जो जिस भाव से सेवा करता है यानी मान-प्रतिष्ठा की भावना से सेवा करता है तो भगवान् उसको वैसा ही फल देते हैं, क्या देते हैं –

माया, मन्दिर, स्त्री, चौथो जग व्यवहार |
ये संता को तब मिलें, जब कोप्या करतार ||

जिसको हमलोग संसार में भगवान् की बहुत बड़ी कृपा समझते हैं वस्तुतः वह भगवान् का कोप होता है | माया अर्थात् धन-सम्पत्ति मिल गयी, मंदिर अर्थात् कोई मठ मिल गया, स्थानाधिपति (मठाधीश) बन गए, स्त्री अर्थात् ५-१० चेलियाँ बन गयीं, स्वादिष्ट व्यंजन (माल-टाल) खिलाने लगीं और जगव्यवहार अर्थात् संसार में बड़ी प्रतिष्ठा हो गयी, गुरु नानकजी कहते हैं कि इन सबका मिलना ईश्वर का कोप है | इस बात को हमें ठीक से समझ लेना चाहिए परन्तु इसे समझना भी आजकल बड़ा मुश्किल है |..........**क्रमशः**

'श्रीमानमंदिर' की नींव 'निष्किञ्चनता'

लेखिका – साध्वी माधुरीजी, मानमंदिर, बरसाना

सर्वश्रेष्ठ व परमपावनकारी 'निष्किञ्चन-भाव' ही है, इसी के विभिन्न स्वरूप-नाम निरपेक्षता, निःस्पृहता निष्कामता, अहैतुकता आदि हैं; विशुद्ध भक्ति का आधार ही ये परम भाव है, स्वयं श्रीभगवान् अपने परमप्रिय सखा श्रीउद्धवजी से कहते हैं –

नैरपेक्ष्यं परं प्राहुर्निःश्रेयसमनल्पकम् |
तस्मान्निराशिषो भक्तिर्निरपेक्षस्य मे भवेत् ||

(श्रीमद्भागवतजी ११/२०/३५)

"हे उद्धवजी ! निरपेक्षता (निष्किञ्चनता) ही परम कल्याणकारी साधन है, इसी के आविर्भाव होने पर वास्तविक भक्ति संप्राप्त होती है |" इस भावोदय के बिना विशुद्ध भक्ति की कल्पना ही नहीं की जा सकती है | 'निष्किञ्चनता' क्या है ? अति संक्षिप्त शब्दों में समझने के लिए 'देह-गेह आदि में 'अहंता-ममता' से शून्य हो जाना ही निष्किञ्चनता (निष्किञ्चनभाव) है |' कथनाशय है कि जिसकी सभी प्रकार की रति-मति-गति एकमात्र परम प्रेमास्पद श्रीभगवान् में ही है, वही 'परम निष्किञ्चन' है | निष्किञ्चन भक्तों के जीवन-धन श्रीहरि हैं और श्रीहरि के भी प्राण-धन निष्किञ्चनजन ही हैं अर्थात् जिस तरह 'भक्त' अकिंचन (निःस्पृह) होकर अपने प्रेमास्पद प्रभु से प्रेम करता है, उसी तरह श्रीभगवान् भी कहते हैं कि मैं भी नित्य निष्किञ्चन हूँ व निष्किञ्चनजन ही मेरे प्राण-प्यारे हैं –

"हरिरधनात्मधनप्रियो रसज्ञः |"

(श्रीमद्भागवतजी ४/३१/२१)

"निष्किञ्चना वयं शश्वन्निष्किञ्चनजनप्रियाः |"

(श्रीमद्भागवतजी १०/६०/१४)

इस 'निष्किञ्चनता' के सबसे बड़े आदर्श उदाहरण श्रीब्रजवासीजन ही हैं, जिनके बारे में स्वयं परम भागवत श्रीब्रह्माजी कह रहे हैं –

यद्धामार्थसुहृत्प्रियात्मतनयप्राणाशयास्त्वत्कृते ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/१४/३५)

ये ब्रजवासीजन परमधन्य हैं, जिन्होंने अपना तन-मन-धन, सुहृद-सम्बन्धी, घर-परिवार आदि सब कुछ श्रीकृष्ण को समर्पित कर दिया है |" इन ब्रजप्रेमीजनों का त्याग व प्रेम एकमात्र श्रीश्यामसुन्दर की प्रसन्नता के लिए ही था; इसे विशुद्ध प्रेम (समर्था रति) कहते हैं | श्रीभगवान् भी स्वयं पवित्र होने के लिए ऐसे निष्किञ्चनजनों की चरण-रज प्राप्ति हेतु उनके पीछे-पीछे चलते हैं –

निरपेक्षं मुनिं शान्तं निर्वैरं समदर्शनम् ।
अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यङ्घ्रिरेणुभिः ॥

(श्रीमद्भागवतजी ११/१४/१६)

'निष्किञ्चना-वृत्ति से परिपूर्ण' परम निष्कामप्रेमी ब्रजवासीजन जो सर्वतः भोगैश्वर्य से रहित वन-पर्वतों में रहकर माधुर्यरसमयी ब्रजलीलाओं का ही आस्वादन करते थे, जिनके जीवन का परमधन श्रीकृष्णगुणगान था, जो प्रत्येक सेवाकार्य करते हुए निरन्तर नाचते-गाते हुए गोपालजी को प्रसन्न करते थे | ब्रजवासियों की निष्किञ्चना रहनी स्वयं श्रीशुकदेवजी ने वर्णन की है -

न नः पुरोजनपदा न ग्रामा न गृहा वयम् ।
नित्यं वनौकसस्तात वनशैलनिवासिनः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/२४/२४)

या दोहनेऽवहनने मथनोपलेप-
प्रेङ्खेङ्खनार्भरुदितोक्षणमार्जनादौ ।
गायन्ति चैनमनुरक्तधियोऽश्रुकण्ठ्यो
धन्या व्रजस्त्रिय उरुक्रमचित्तयानाः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/४४/१५)

'निष्किञ्चनता' रसमयी भक्ति का प्रवेश द्वार है तो अन्तिम द्वार भी यही है अर्थात् भक्तिमार्ग की साधना भी 'निष्किञ्चन भाव' से प्रारम्भ होती है और सिद्धावस्था संप्राप्त होने पर भी यही भाव परमावश्यक है | द्वारिकालीला में श्रीकृष्ण के परम प्यारे भक्त श्रीसुदामाजी परम निष्किञ्चन भक्त हैं, जिनकी धन-वैभव के अभाव व प्राप्ति में वही एकवृत्ति बनी रही | मानस-प्रणेता गोस्वामी तुलसीदासजी भी स्वाभाविकी-प्रेम (समर्था रति) की यही पहिचान लिखते हैं –

"स्वामि सखा पितु मातु गुर जिन्ह के सब तुम तात |"

अथवा

"जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु |"

(श्रीरामचरितमानसजी, अयोध्याकाण्ड – १३०, १३१)

श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान, जो इस समय निष्काम भक्ति के प्रचार-प्रसार, निःस्वार्थ ब्रज-सेवा और पूर्णतः निःशुल्क ब्रजयात्रा व आदर्श गौसेवा के लिए विश्व-विख्यात है; इसकी स्थापना अतिनिःस्पृह ब्रजनिष्ठ 'पद्मश्री' विभूषित संत श्रीरमेशबाबामहाराज के द्वारा की गई है | निष्काम प्रेममयी विशुद्ध भक्ति (निष्किञ्चना भक्ति) के पाठ की शिक्षा श्रीबाबामहाराज के सत्संग से ही जन-जन में प्रसरित हुई है | सन् १९५३ में श्रीबाबा के प्रयाग से ब्रजागमन के पूर्व मानगढ़ (मानमंदिर) उजड़ चुका था, चोरों-डाकुओं, सर्पों और प्रेतात्माओं का आश्रय स्थल बना हुआ था | श्रीबाबा ने यहाँ अखण्ड निवास करते हुए अपने उच्च त्याग-वैराग्यमय आचरण के साथ श्रीराधामानबिहारीलाल की चरणसन्निधि में श्रीब्रजधाम की निष्काम आराधना की, पूर्ण निष्किञ्चन-वृत्ति के साथ धाम-सेवा व लोककल्याण का जो सर्वोच्चतम कार्य किया, वह सारे विश्व के लिए अनुकरणीय है | ६५ वर्ष से अखण्ड ब्रजवास करते हुए श्रीबाबामहाराज ने अपने पास कभी भी एक पैसा नहीं रखा, किसी से दान की याचना नहीं की और न ही आज तक उन्होंने किसी को अपना शिष्य-शिष्या बनाया | महाराजश्री की निष्काम धाम-सेवाराधना में सहयोग देने के लिए श्रीजी की अनुकम्पा से ही निष्किञ्चन-वृत्ति वाले भक्तजन स्वतः जुड़ते गये, जिनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व सर्वात्मभाव से समर्पित ब्रजवासीजनों का

योगदान है – जिनमें जनाबाई स्वरूपा संत-सेवा निष्ठ श्रीयमुनामाताजी व उनके सुपुत्र डॉ.श्रीरामजीलालशास्त्री व उनका परिवार (रसमंदिर) और श्रीराधाकान्तशास्त्री व उनका परिवार (मानपुरनिवासी) | श्रीबाबामहाराज के मानगढ़-निवास के समय से ही मानमंदिर के प्रबंधक श्रीराधाकांतजी के पिताश्री प्रकाशजी सबसे पहले श्रीबाबा के सानिध्य में आये और उन्होंने भगवन्नाम-संकीर्तन के प्रचार में पूर्ण सहयोग दिया, बाद में उनके सुपुत्र राधाकान्त ने तो अपने घर-परिवार का त्यागकर परमपूज्य श्रीबाबामहाराज के सानिध्य में ब्रजसेवा व लोककल्याण के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन ही समर्पित कर दिया | उनके पारिवारिक सदस्य भी धाम-सेवा और नाम-कीर्तन के प्रचार में अभूतपूर्व सहयोग दे रहे हैं | इसी प्रकार मानमन्दिर सेवा संस्थान के अध्यक्ष डॉ. श्रीरामजीलालशास्त्री जी भी बचपन से ही श्रीबाबा महाराज के शरणागत हो गए, उन्होंने महाराजजी से धर्म-शास्त्रों, विशेषकर श्रीमद्भागवत का विशद अध्ययन कर उनकी आज्ञा से देश-विदेश में निष्काम भाव से श्रीमद्भागवत कथा के प्रचार-प्रसार करने का संकल्प लिया और आज ये सम्पूर्ण भारत और विदेशों में निष्काम वृत्ति से भागवत-कथा का प्रचार करने में संलग्न हैं, श्रीराधारसमंदिर में प्रतिदिन हजारों लोगों को निःशुल्क रूप से भोजन प्रसाद उपलब्ध कराया जाता है | उनके परिवार में उनकी भतीजी साध्वी मुरलिकाजी, साध्वी श्रीजी और भतीजे श्री राधिकेश जी भी महाराजश्री की कृपा से भागवत-व्यास बनकर देश-विदेश में भागवत-कथा का प्रचारकर निःस्वार्थ भाव से लोक कल्याण कर रहे हैं; जिनमें मान-प्रतिष्ठा, भोग-वैभव आदि किसी की भी कामना नहीं है | इसी निष्किञ्चन-वृत्ति की परम्परा में मानमन्दिर पर रहने वाले भागवताचार्यों में संत श्रीमहेशचन्द्रजी, संत श्रीसुरेशजी, संत श्रीभक्तशरणजी आदि हैं जो पूज्य बाबा महाराज के भक्तिमय सिद्धान्तों पर चलकर समाज को कथा-कीर्तन के माध्यम से विशुद्ध भक्ति की शिक्षा दे रहे हैं | इसी क्रम में श्रीबाबामहाराज के विशेष सेवा-परिकरों में सर्वात्मभाव से समर्पित परम सेवक संत श्रीब्रजराजशरणजी व संत श्रीमाधवीशरणजी की 'बाबाश्री के प्रति अनन्य सेवा-निष्ठा' भावुक भक्तजनों की सेवा- भावना को बढ़ा रही है | संत श्रीब्रजकिशोरजी का भी नाम भी इसी श्रृंखला में जुड़ गया है, जो श्रीबाबामहाराज के शरणापन्न होकर मानमंदिर-पत्रिका के प्रकाशन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, इसके साथ ही पूर्ण निष्काम-वृत्ति के साथ आप अन्य संतों को साथ लेकर ब्रज के गाँव-गाँव में भगवन्नाम-संकीर्तन का प्रचार कर रहे हैं | पूर्ण निष्किंचन-वृत्ति का सिद्धांत ही मानमंदिर सेवा संस्थान को आगे बढ़ा रहा है | इसी क्रम में मानमंदिर की साध्वियों की भी अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है, जिनका श्रीकृष्ण-प्रेम साक्षात् मीराबाई व करमैतीबाई की तरह है | लगभग सवा सौ की संख्या में मानमंदिर में निवास कर रही ये देवियाँ पूर्ण संयम और सदाचार के साथ श्रीजी की आराधना, निष्काम सेवा और निष्काम भाव से लोकहित के लिए देश-विदेश में प्रचार कर रही हैं | मानमंदिर की सायंकालीन आराधना में प्रतिदिन ये आराधिकाएँ २ घंटे तक श्रीराधामाधव की प्रसन्नता हेतु नृत्याराधना करती हैं, ब्रह्ममुहूर्त में ये बरसाने की प्रभात फेरी में प्रतिदिन जाती हैं, इसके अतिरिक्त मानमंदिर की अन्य सेवा-कार्यों में भी सहयोग करती हैं | जिस प्रकार 'रसीली ब्रजयात्रा ग्रन्थ' की लेखिका मुरलिकाजी व उनकी अनुजा व्यासाचार्या श्रीजी निष्काम भाव से देश-विदेश में भागवत-कथा का प्रचार-प्रसार करती हैं, उसी प्रकार बाल साध्वियों की टीम में बाल साध्वी गौरीजी, मधुवनीजी, दयाजी तथा विरागाजी इत्यादि कई निष्काम आराधिकाएँ भी ब्रज

और ब्रज के बाहर श्रीमद्भागवत कथा का निःस्वार्थ भाव से प्रचार-प्रसार कर रही हैं | मानमंदिर की दिव्य साध्वियाँ सम्पूर्ण भारतवर्ष की नारी जाति के समक्ष निष्काम भक्ति, सेवा, त्याग, संयम और शुद्धाचरण के लिए अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत कर रही हैं | सनातन धर्म को धारण करने वाले मूल आधार स्तंभों में प्रथम गौमाता की निःस्वार्थ सेवा हेतु पूज्य बाबा महाराज द्वारा जो श्रीमाता जी गौशाला की स्थापना की गयी है, उसमें पूज्य श्री के निःस्वार्थ सेवा और त्याग के सिद्धांत का पालन करते हुए यहाँ के व्यवस्थापक संत श्रीब्रजशरणजी ने तो गौ-रक्षण व गौ-सेवा का जो प्रशंसनीय कार्य किया है, वह तो सम्पूर्ण विश्व के लिए एक परमादर्श उदाहरण है | संत श्रीब्रजशरणजी पूर्ण त्यागमयी वृत्ति के साथ गौ-सेवा के प्रति समर्पित हैं, यहाँ तक कि वह गौशाला की गायों का दूध भी नहीं पीते हैं, ऐसी परम निष्काममयी-वृत्ति से उनके नेतृत्व में यह गौशाला केवल ४ गायों से प्रारम्भ होकर आज ६० हजार गायों की संख्या तक पहुँच गयी है | श्रीब्रजशरणजी के कुशल नेतृत्व में गायों की सेवा हेतु इस गौशाला में बहुत से महत्वपूर्ण कार्य हो रहे हैं | बीमार गायों की चिकित्सा हेतु १५ करोड़ रुपये की लागत से यहाँ विश्व का सबसे बड़ा गौ-चिकित्सालय भी निर्मित कराया जा रहा है | श्रीमाताजी गौशाला में किसी से दान की याचना नहीं की जाती है, प्रतिदिन २५ लाख रुपये गौ-सेवा हेतु व्यय हो जाते हैं | गायों की निष्काम भाव से सेवा-संरक्षण की यह गौशाला ब्रज के लिए नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व के लिए निष्काम गौ-सेवा की एक सर्वोत्तम शिक्षा दे रही है | यदि आज भारतवर्ष की अन्य गौशालाएं भी सन्त श्रीब्रजशरण जी के निःस्वार्थ सेवा और त्याग के आदर्श पर चलें तो सम्पूर्ण भारत में गौ हत्या की समस्या ही न रह जाए | आज शिक्षा के नाम पर भारत में पाश्चात्य सभ्यता पर आधारित स्कूल-कॉलेज खुल गए हैं और उनमें धर्महीन-नैतिकता विहीन नास्तिक शिक्षा दी जा रही है, जिसे पढ़कर आज की युवा पीढ़ी चरित्रहीन और भ्रष्ट हो रही है; उसके सुधार हेतु परमपूज्य श्रीबाबामहाराज के द्वारा मानमंदिर में प्राचीन भारत के गुरुकुलों की भाँति एकमात्र आध्यात्मिक शिक्षा के प्रचार-प्रसार हेतु दीदी जी गुरुकुल की स्थापना की गई है, इसमें लगभग सवा सौ बच्चे निःशुल्क शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, इस गुरुकुल के बच्चों को भक्तिमय शास्त्रों की शिक्षा के साथ निःस्वार्थ सेवा का पाठ पढ़ाया जाता है, इस गुरुकुल के छोटे-छोटे बच्चे ब्रह्म मुहूर्त में जागकर प्रतिदिन श्रीजी की मंगला आरती का दर्शन करते हुए भगवन्नाम-संकीर्तन के साथ बरसाने की परिक्रमा करते हैं, ब्रज के गाँवों में भी ये बच्चे समय-समय पर निष्काम भाव से भगवन्नाम का प्रचार कर ब्रज की सच्ची सेवा करते हैं | मानमंदिर संस्थान के द्वारा श्री बाबा महाराज के नेतृत्व में प्रतिवर्ष चालीस दिवसीय ब्रजयात्रा कराई जाती है, यह यात्रा पूर्णतया निःशुल्क है, इसमें देश भर से पंद्रह हजार से अधिक यात्री हर वर्ष सम्मिलित होते हैं, उन्हें दोनों समय भोजन, आवास तथा अन्य सुविधाएं पूर्णतया निःशुल्क उपलब्ध कराई जाती हैं, यह यात्रा इस समय भारत की सबसे बड़ी निःशुल्क पदयात्रा है | मानमंदिर में सौ से अधिक सन्त रहते हैं, जिनका जीवन पूर्ण त्याग-वैराग्य और निःस्वार्थ सेवा से ओतप्रोत है | ये संत अपने पास पैसा नहीं रखते हैं और ब्रजवासियों की मधुकरी की रोटी का शुद्ध प्रसाद पाकर अपना जीवन निर्वाह करते हैं | ये सन्त प्रतिदिन भगवन्नाम कीर्तन करते हुए ब्रज की गलियों में ब्रजवासियों की मधुकरी (भिक्षा की रोटी) लेने जाते हैं | श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान इस तरह पूर्ण निष्किंचन-वृत्ति के सिद्धांत पर आधारित है, यहाँ के सदस्यों में न तो अपनी मान-प्रतिष्ठा का लोभ है, न धन का लोभ है और न ही सांसारिक विषयों के प्रति आसक्ति है | ऐसे उच्चतम आदर्शों से प्रेरित होकर यह संस्थान धाम-धामी की सेवा में सतत् संलग्न है |

'श्रीश्यामलक्ष्मी गौ-चिकित्सालय' के संबंध में 'श्रीमाताजी गौशाला' में अवलोकन-बैठक

श्रीश्यामलक्ष्मी गौ-चिकित्सालय जो कि माताजी गौशाला में निर्माणाधीन है, के संबंध में एक अवलोकन बैठक दिनांक १६ दिसम्बर को रखी गई, जिसमें श्रीमहावीरप्रसादजी, श्रीसुधीरहलवानियाजी, श्रीजितेन्द्र चौधरीजी, अनीता शर्माजी, अंकित जैनजी, श्रीराधाप्रियजी, श्रीब्रजशरण बाबा, श्रीहिमांशुजी आदि गणमान्यजन उपस्थित हुए | 'श्रीश्यामलक्ष्मी गौ-चिकित्सालय' का उद्घाटन बसंत पंचमी के शुभ अवसर पर उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री श्रीआदित्यनाथ योगीजी द्वारा किया जाएगा, जिसमें देश के अनेक संत-महापुरुष उपस्थित रहेंगे |

= भविष्य की योजनायें =

- **दुर्घटनाग्रस्त गायों के लिए तीन एम्बुलेंस**
- **गौमूत्र से टेबलेट एवं कैप्सूल बनाने की कार्यशाला**
- **गर्भवती गायों के लिए पृथक विशेष व्यवस्था (शेड)**
- **गौवंश के लिए होम्योपैथिक चिकित्सा**
- **पंचगव्य चिकित्सा**
- **गौशाला में गोबर-गैस से ६५ किलो वाट विद्युत-उत्पादन की इकाई की स्थापना**

(हर माह गौशाला में मासिक किसान गोष्ठी की शुरुआत की गयी है | किसान भाइयों के लिए जैविक खाद के फायदे, रासायनिक खाद से होने वाले नुक्सान आदि बिन्दुओं पर चर्चा की गयी)

(मानमन्दिर सेवा संस्थान में रहने वाले साधु-संत ब्रज के गाँव-गाँव में जाकर हरिनाम प्रचार, गोपालन के महत्त्व के साथ-साथ गौ आधारित कृषि की जानकारी दे रहे हैं)

श्रीबाबाजी महाराज के जन्मदिवस (18 दिसम्बर 2019) पर बाल उद्गार —

सो० ललिता सखि अवतार, प्रकट भये 'हरिदास' जिमि।
शाश्वत रसावतार, ललित कला ब्रज रस निपुण॥
वन्दहुँ परम विरक्त, श्री रमेश बाबा चरण।
गुरू अनन्य गोभक्त, वास मानगढ़ ब्रजरसिक॥

दो० — पौष कृष्ण द्वितिय जन्म दिन, दिवस घड़ी सुपुनीत।
'ब्रजरजआश्रित' मिलि सकल गाओ मंगल गीत॥

मंगलगीत (रसीला गेय पद)

जनम प्रयाग, वास बरसानो, शिखर मानगढ़ भायो है।
गाओ मंगल गीत, जनम दिन बाबा श्री को आयो है॥

1- करुणा पूरित हृदय, साधना युगल प्रेम की बाँकी है।
सौम्य उदार, सरल स्नेही, परदुख कातर झाँकी है॥
→ दृग गम्भीर, शान्त मुख मण्डल, तेज अपरिमित छायो है — गाओ०

2- गो रक्षण, गोवंश प्रेम की, अद्भुत अलख जगायी है।
'श्रीमाताजी गौशाला' निःस्वार्थ योजना लायी है॥
→ जहाँ निराश्रित, हिंसा पीड़ित गैयन आश्रय पायो है — गाओ०

3- युगल प्रेम डूबे गीतों का, मुख से मधुर प्रवाह झरे।
जन जन की आत्मा, तन मन, संतुष्टी का उद्योग करे॥
→ दिव्य ज्ञान मधुरिम वाणी सों, ब्रजरस गलिन बहायो है — गाओ०

4- ब्रजाचार्य, भक्तों रसिकों के, सद्ग्रंथों का शोध किया।
अनाचार ब्रज वैभव नाशक, दुष्टों का प्रतिरोध किया॥
→ 'श्रीराधारानी यात्रा' सों ब्रज को दरस करायो है — गाओ०

5- 'ब्रजरज आश्रित' है अभिलाषा बाबा कोटिन बरस जियो।
हम ब्रजवासी ऋणी आपके, जो अखण्ड ब्रजवास कियो॥
→ गिरि, वन, कुण्ड सुरक्षित कीन्हे, ब्रज अस्तित्व बचायो है — गाओ०

(परम पूज्य 'बाबाश्री' के श्री चरणों मे मेरी मानसिक उपस्थिति)

श्रीबाबा जी महाराज के समस्त श्रद्धालुओं, स्नेही स्वजनों को
सेवा में सादर प्रेषित → 'ब्रजरजआश्रित'
कानपुर — 18/12/2019